सुलतान महमूद गज़नवी

सुलतान महमूद ग़ज़नवी

मुहम्मद हबीब

अनुवाद
मात-दस्वरूप वर्मा

राधाकृष्ण

विषय-सूची

सुलतान महमूद ग़ज़नवी

दूसरे सस्करण की भूमिका

इस पुस्तक को लिखे लगभग सत्ताईस वष हुए। 1924 ई० व लखनऊ के साम्प्रदायिक दगा के दौरान नफरत से भरे वातावरण म मैंने पुस्तक के अशो को कई बार लिखा तारि मानवता न्याय, सहनशीलता और धम निरपेक्षता की अपनी उस जबदस्त चाह को अभिव्यक्ति दे सकू जो मेरे पूवदशीय मन को लगातार सता रही थी। उसके बाद म जो कुछ हुआ अथात दुनिया भर म नफरत का बढना और शासक वग के लोभ को पूरा करने के लिए लाखो-करोडो बगुनाह मर्दों औरतो और बच्चो की मौत ने मेरी धारणाओ की पुष्टि ही की है। उदू के अखबारो ने इस पुस्तक की जबरदस्त आलोचना की। चूंकि ये आलोचनाएँ बदले की भावना स ग्रस्त तीखी और नम्रतापूण तथा वास्तविक घटनाओ की अज्ञानता पर आधारित थी इसलिए मैंने उन पर ध्यान नहीं दिया। मैं इसे फिर पुराने ही रूप म प्रकाशित कर रहा हूँ।

सचाई यह है कि पिछले तीन सौ वर्षों के दौरान मुस्लिम नताओ को—चाहे वे राजनीतिज्ञ हो या मुल्ला—पीछे देखने की मनोवत्ति के अलावा और किसी मनोवत्ति की जानकारी नहीं रही और सभी मुस्लिम जमातो को हमेशा तेज होती प्रतिक्रियावादी धर्मान्धता की एक के बाद एक लहरो की चपेट म आना पडा इसका नतीजा यह हुआ कि अपने पैरो पर खुद खडे होने म और आधुनिक विश्व की कठिन परिस्थितियो के मुताबिक अपने जीवन तथा अपनी सस्थाओ को ढालने या आधुनिक विज्ञान के फलत परिदृश्य म उचित भूमिका निभाने म असमर्थ मुसलमानो को मजबूरन किसी न किसी विदेशी साम्राज्यवाद का सरक्षण ढूंढना पडा। इन सारी बातो के कारण हम इन सचाइयो स आँख नहीं मूंदनी चाहिए कि (क) मुस्लिम क्रान्ति हर युग के लिए विश्व इतिहास का एक अनिवाय तथ्य रही है (ख) कुरान म वर्णित ईश्वर सम्बन्धी धारणा मानव-जाति की खुशहाली के लिए अत्यन्त मूल्यवान क्रान्तिकारी शक्ति थी तथा आज भी है, और (ग) अपने सर्वोत्तम प्रतिपादको की शिक्षा के अनुसार मध्यकाल के उच्चतर मुस्लिम धम और सस्कृति म 'मानवता की सेवा के लिए धम' की भावना पहले से मौजूद

है और उस विचार म अभिन्न है जिसे अध्यक्ष माओ त्से तुग और हमारे महात्माजी न इस पीढ़ी के लिए प्रवर्तित किया। पिछले तीन सौ वर्षों के दौरान पश्चिमी यूरोप और अमरीका की प्रमुख विशिष्टताओ म नस्लगत अहकार मुख्य रूप से बना रहा है और यह स्पष्ट है कि पूजीवाद और पूजीवादी उत्पादन के विकास न उन्हे अस्थायी श्रेष्ठता प्रदान कर दी। हम खुद को उसी बीमारी का शिकार नही होने देना चाहते। हम एक तरह का भेद भाव हटाकर दूसरी तरह का भेद भाव लाने के पक्ष मे नहा हैं बल्कि हम हर तरह का भेद भाव समाप्त करना चाहते हैं।

किसी भी देश के इतिहास का अर्थ या मूल्य विश्व इतिहास के सन्दर्भ स परे नही है। महमूद मध्यकालीन अजम (गर-अरब एशिया) का एक असाधारण व्यक्तित्व है और उसके बारे म इसी बात स फसला किया जायगा कि उसन सम्बद्ध जनता की कितनी सेवा की या उस पर कितना जुल्म ढाया। इतिहासकार का कोई देश और धर्म नहीं होता। वह समूची मानव जाति का अध्येता है। उस मनुष्य के विस्तृत होते आदर्शों उसके विकसित होते उत्पादन उपकरणो और उसके विकासशील सामाजिक सगठनो के आधार पर एक धम से दूसरे धम तक एक देश से दूसरे देश तक और एक युग स दूसरे युग तक की गयी मनुष्य की द्वद्वात्मक यात्रा की छानबीन करनी चाहिए।

फिर भी यदि कोई कृपालु पाठक यह सोचता है कि उस सुलतान महमूद का आकलन धार्मिक और ईश्वरपरक आधार पर ही करना चाहिए तो मैं उसका ध्यान उन दो महान विद्वानो की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा जिनकी धार्मिक कट्टरता के बारे म कम स कम किसी तरह का शक नही किया जा सकता।

इमाम अबुल फजल बहाकी सुलतान महमूद के शासनकाल म शाही सचिवालय म एक छोटा अफसर था। महमूद के बेटे मसूद के शासनकाल म उस शाही सचिव या वजीर अबूनस्र मिश्कान का सहायक बना दिया गया। इसके भी बाद म जब गजनवियो का साम्राज्य सिकुडकर एक स्थानीय रियासत भर रह गया और शक्ति और सम्मान स विहीन हो गया तब बहाकी न शाही सेवा स छुट्टी ली और धार्मिक कामो म अपना समय बिताने लगा तथा अपनी मशहूर पुस्तक **तारीख ए आल-ए-सुबुक्तगिन** (सुबुक्तगिन राजवश का इतिहास) के तीन खड लिखने म लग गया। गजनवियो का यह अवकाश प्राप्त अफसर सच बोलने के मामले म बहुत निर्भीक था और हमे इस बात म कोई आश्चर्य नही होना चाहिए कि उसकी इस महान पुस्तक का केवल तीसरा खड जो सुलतान मसूद के बारे म था, बच रहा है। फिर भी इस बचे हुए खड मे ,इमाम बहाकी ने लिखा है

'अमीर मसूद ने मुझे अन्दर बुलाया। वानबुम, उसने कहा और नौकर अगाची को थैले लाने का हुक्म दिया। फिर मेरी ओर देखते हुए उसने कहा, 'इसे ले लो। इसमें सोने के एक हजार टुकडे हैं और हर टुकडे का वजन एक मिसकल है (1 मिसकल=$1\frac{3}{7}$ ड्राम)। अबूनस्र से कहो कि यह वह सोना है जिसे मेरे वालिद (अल्लाह उनकी खैर करे!) ने हिन्दुस्तान में धर्म-युद्ध (गजवा) के बाद हासिल किया था। सोने के बुतों को टुकडे टुकडे कर दिया गया था और (सिल्लियों मे) ढाल दिया गया था। यह हलाल की कमाई है। अपने हर सफर में वह यह सारी सम्पदा मुझे दे देते थे ताकि अगर मैं किसी को दान देना चाहूँ तो इसी सम्पदा में से दूँ जो हलाल की कमाई थी। मुझे खबर मिली है कि बस्ट का काज़ी अबुल हसन और उसका बेटा ज़बरदस्त गरीबी भुगत रहे हैं। वे किसी का दिया हुआ कुछ कुबूल नहीं करते और उनके पास खाने के लिए कुछ भी नहीं है। इन थैलों में से एक थैला बाप को और दूसरा बेटे को दे दो ताकि वे इस हलाल की सम्पदा से आराम से जिन्दगी बसर कर सकें और मैं भी अपने फर्ज से छुट्टी पाऊँ और अपनी सेहत को ठीक रख सकूँ।'

"मैंने उन थैलों को ले लिया और अबूनस्र को देते हुए सारा वाक़या कह सुनाया। अबूनस्र ने अल्लाह का शुक्रिया अदा किया और कहा कि खुदावन्द ने क्या खूब तक़दीर बख्शी है। मैंने सुना है कि एक ज़माना था जब अबुल हसन और उसके बेटे को दस दिरहाम (ताँबे के सिक्के) भी नहीं मिल पाते थे।' अबूनस्र अपने घर चला गया और थैलों को अपने साथ लेता गया।

तीसरे पहर (ज़ोहर) की नमाज़ के बाद अबूनस्र ने किसी को भेजकर काज़ी अबुल हसन और उसके बेटे को बुलवाया। वे आये और अबूनस्र ने सुलतान का सन्देश काज़ी को सुनाया। काज़ी ने सुलतान के लिए अल्लाह से दुआएँ मांगी और जवाब दिया 'यह मुझे इज़्ज़त देना है। मैंने इसे कुबूल किया और अब मैं इसे वापस करता हूँ। मैं इसे नहीं ले सकता क्योंकि अब मेरे आखिरी दिन करीब हैं और अल्लाह के यहाँ जब हिसाब होगा तो मैं क्या जवाब दूंगा? मैं यह नहीं कहूँगा कि मुझे बहुत ज़रूरत नहीं थी लेकिन मेरे पास जितना है वही मेरे लिए काफी है, इसलिए इस सोने का मेरे लिए कोई मतलब नहीं है।

'अबूनस्र ने कहा 'अल्लाह खैर करे यह सोना सुलतान महमूद ने हिन्दुस्तान के मन्दिरों से अपनी तलवार के ज़ोर से हासिल किया है मन्दिर के बुतों को बरबाद और टुकडे-टुकडे कर दिया गया। पैगम्बर के बन्दे (बगदाद के खलीफा) ने सुलतान महमूद के इस काम को सही ठहराया है लेकिन काज़ी इसे मंज़ूर नहीं करेगा।'

'काज़ी ने जवाब दिया खुदावन्द की उम्र लम्बी हो! लेकिन खलीफा की बात (हालत) मुझसे अलग है। वह एक इलाके के शासक हैं। इसके अलावा,

ख्वाजा अबूनस्र तुम इन लड़ाइयों में अमीर महमूद के साथ साथ रहे थे, लेकिन मैं नहीं। मुझे अभी तक यह नहीं बताया गया है कि ये लड़ाइयाँ पयम्बर के रीति रिवाजों के मुताबिक चलायी गयी थीं या नहीं। मैं किसी भी हालत में इस सोना या किसी तरह के एहसान को कुबूल नहीं करूँगा।

अबूनस्र ने जवाब दिया यदि तुम खुद अपने लिए इसे कुबूल नहीं कर सकते तो अपने शागिर्दों गुर्बा रीता (उचित नागा) और दरवेशों को दे दो।

मुझे यह नहीं पता है कि बस्ट में ऐसा कोई मुस्तहिक है जिसे यह सोना दिया जा सके। और मैं अपने को उस हालत में क्यों डालूँ कि सोना तो कोई दूसरा आदमी ले जाय और अल्लाह के यहाँ हिसाब मुझको देना पड़े! किसी भी हालत में मैं यह जिम्मेदारी नहीं लूँगा।

अबूनस्र उसके बेटे की तरफ मुड़ा और बोला तुम अपना हिस्सा ले लो।

' अल्लाह ख्वाजा की उम्र लम्बी करे! मैं उस आदमी का बेटा हूँ जिसने अभी अपनी बातें कही हैं। अगर मैंने उसे सिर्फ एक बार देखा होता और उसके अहवाल (आध्यात्मिक शक्ति) और उसकी जिन्दगी के तौर-तरीके के बारे में थोड़ी भी जानकारी पाता तो इसे मैं अपना फर्ज समझता कि जिन्दगी भर उसके बताये रास्ते पर चलूँ। लेकिन मैंने तो उसके साथ साल गुजारे हैं। मैं भी उसकी तरह डर रहा हूँ कि अल्लाह को क्या हिसाब दूँगा! दुनियादारी की चीजों में जो थोड़ी बहुत चीजें मेरे पास हैं व ईमानदारी से पायी गयी चीजें हैं और वे मेरे लिए काफी हैं। इन चीजों में इजाफा करने की मेरी कोई ख्वाहिश नहीं है।

'ख्वाजा अबूनस्र ने जवाब दिया 'तुम दोनों बेमिसाल हो। अल्लाह तुम्हें बरकत दे! वह रो पड़ा और उन दोनों को उसने वापस भेज दिया। काजी और उसके बेटे से हुई बातचीत के बाद वह दिन भर सोच में डूबा रहा। अगले दिन उसने अमीर मसूद को एक खत लिखा जिसमें इन सारी बातों को बयान किया गया था और सोना लौटा दिया। अमीर को बहुत अचम्भा हुआ।

(फारसी पाठ, पृष्ठ 636 38)

इस बात की आशा नहीं की जा सकती थी कि महान शायर सादी ने फारसी की पुस्तकों में सबसे ज्यादा पढ़ी जाने वाली अपनी पुस्तक गुलिस्ताँ में कोई ऐसी बात कही होगी जो उस युग के लोगों की धार्मिक चेतना को चोट पहुँचाये। लेकिन फिर भी महमूद के बारे में उनका आकलन बहुत निम्न किस्म का है और उसमें दरअसल महमूद का निन्दनीयपूर्ण तसवीर उभरती है। सादी हमें बताते हैं कि खुरासान के एक मलिक (शासक) ने एक दिन सपने में देखा कि सुबुक्तगिन के बेटे सुलतान महमूद का समूचा शरीर टुकड़े टुकड़े हो गया है और धूल में मिल गया है। लेकिन उसकी आँख की पुतलियाँ [illegible]

नाच रही थी और चारो ओर देख रही थी। दार्शनिको के लिए इस सपन की व्याख्या करना कठिन हो गया, लेकिन दरवश ने इसकी ठीक ही व्याख्या की और कहा कि वह अभी भी चारो ओर देख रहा है कि उसका साम्राज्य दूसरे के हाथो म पहुच गया है। (गुलिस्तां अध्याय 1) शेख सादी और उनके सम *कालीनो की निगाह म इस्लाम के प्रति महमूद की सेवाओ का कोई सवाल ही* नहीं था। वे दिल्ली और दौलताबाद के हिंदी तुर्की शासन वग के सदस्य नहीं थे जिसके सरक्षण म सुलतान महमूद स सम्बन्धित *तमाम किवदन्तिया गढी गयी* थी। इसामी के फुतूह उस सलातीन म हम अविश्वसनीय कहानिया का एक अच्छा उदाहरण मिलता है। इस्लाम को शासक वग का धम बनाने के लिए जब उसके आदर्शों को दफा दिया गया तब कही जाकर महमूद एक धार्मिक नायक' का दर्जा पा सका। आधुनिक साम्राज्यवादी का सबस असम्भव रूप—पन इस्लाम वादियो का स्वप्न साम्राज्यवाद —उन कल्पित कथाओ को जिंदा रखना है। असली महमूद जो सचमुच सादी की निंदा के योग्य नही था इन कथाओ पर *उतना ही आश्चर्यचकित होता जितना उसका बेटा यह सुनकर हुआ था कि बस्ट* के काजी ने शाही उपहार के रूप म हिंदुस्तानी मंदिरो का सोना लेन से इनकार कर दिया।

गजनी' शब्द का इस्तेमाल करने के लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। सही शब्द है गजनियान—जिसका अथ नदी के दोनो किनारो पर बसा शहर है लेकिन अगरेजी म इसको इस्तेमाल करना बहुत कठिन होगा। 'गजनी' एक आधुनिक रूप है और इसका आधुनिक गजनी के ही रूप म इस्तेमाल किया जाना चाहिए। आधुनिक गजनी एक शहर का नाम है जो चारो ओर स खदको और दीवालो से घिरा है। '*गजना अरबी रूप है जिसका इस्तेमाल हमारे फारसी इतिहास* कार नही करते।

पहले सस्करण म अनुक्रमणिका नही थी। मैं प्रमाणो की सूची रखना अनावश्यक भी समझता हूँ। मेरे युवा मित्र और सहकर्मी श्री खालिक अहमद निजामी, एम० ए० ने कृपापूर्वक इन दोनों कमियो को दूर करन म मदद पहुँचायी है।

मोहम्मद हबीब

बदर बाग
मुस्लिम यूनिवर्सिटी अलीगढ़।
22 दिसम्बर, 1951

अध्याय 1

दसवी सदी मे मुस्लिम जगत

जान स्टुअट मिल का कहना है जितन भी नीति विषयक सिद्धात और धार्मिक मत है लगभग व सभी अपन प्रवतकों तथा उन प्रवतकों के शिष्यों के लिए अथवत्ता और आजस्विता स भरपूर है। इन सिद्धान्तो और मतो का नष्ट न होने वाली एक शक्ति के रूप म तभी तक महसूस किया जाता रहा है और शायद तब तक ही उन व्यापकतम चेतना के रूप म प्रदर्शित किया जाता रहा है जब तक अन्य मतो के ऊपर इनका आधिपत्य कायम करन के लिए सघष बना रहता है। अन्ततोगत्वा यह या तो अपन का स्थापित कर लता है और सामान्य मत बन जाता है अथवा इसकी प्रगति रुक जाती है, जो आधारभूमि यह प्राप्त कर चुका होता है उस पर अपना अधिकार तो बनाये रखता है पर उस दायर स बाहर उसका प्रसार नही हो पाता। इसी समय स प्राय उक्त सिद्धान्त की जीवन्त शक्ति का ह्रास माना जाता है। कारण यह है कि जब यह पुरानी मत का रूप ले लेता है और इस सक्रियता की बजाय निष्क्रियता के साथ ग्रहण किया जाता है जब सम्बद्ध मनो स उत्पन्न प्रश्नो पर इसकी जीवनदायी शक्तियो को पहल जैसी तीव्रता के साथ इस्तमाल करन के लिए मस्तिष्क की कोई विवशता नही रहती तो इसके प्रतिपाद्यों का छोडकर शेष सभी विश्वासो को भूलन अथवा इसको एक कुठित और जड सहमति दन की उत्तरोत्तर प्रवत्ति पैदा होती है। ऐसा लगता है मानो उन अपनी चेतना म उपलब्ध करन की आवश्यकता स पर किसी आस्था का स्वीकार किया जा रहा हो।

आध्यात्मिक उत्साह का यह निर्बलता विभिन्न चरणो म सभी धर्मो म देखी जा सकती है और 9वी सदी म अब्बासी खलीफाओ क पतन स लेकर मगालो द्वारा मुस्लिम एशिया की फतह तथा 13वी सदी म रहस्यवाद के विकास क दौरान के समूच इस्लामी इतिहास म देखी जा सकती है। यह वह दौर था जब विज्ञान,

साहित्य और कला के क्षत्र म महान उपलब्धियां हासिल हो गयी थी तथा मानव ज्ञान के दायरे को उन विद्वानो ने काफी विस्तार दे दिया था जो प्लेटो तथा अरस्तू के दर्शन से प्रशिक्षित हो चुके थ। यह वह दौर था जब धुआंधार ढग स राज नीतिक गतिविधियाँ जारी थी साम्राज्यो की नावें पड और उखड रही थी शहरो को बसाया और बरबाद किया जा रहा था। लेकिन यह दौर परिमाजन और संस्कृति का था यह आस्था का नही बल्कि एक मादक भौतिक सभ्यता का दौर था। शुरू के दिनो म मुसलमानो के अन्दर धम प्रचार का जो जोश था वह असाधारण सफलता के कारण गायब हो गया और उस सम्प्रदाय को जो समाज के कमजोर वग को ऊपर उठाने के लिए दुनिया म आया था निहित स्वार्थों की रक्षा करने के लिए और अतिप्राचीन खामियो को बनाये रखने के लिए एक परकोटे के रूप म इस्तेमाल किया जाने लगा। वितंडापूण धम विज्ञान की काफी प्रचुरता थी जिनके बिना भी काम चल सकता था। इस तरह के धम विज्ञानो न जिस कट्टर धार्मिक उन्मादो को भडकाया उसस कई पीढियो के इतिहास पर धब्बा लग गया। इस अवधि म कट्टरपंथियो और विधर्मियो न एक दूसरे पर जितना अमानवीय जुल्म किया उतना उन्होंने गर मुस्लिम मतावलम्बियो के साथ भी नही किया—इन्ह व एक सम्मानीय युद्ध का सम्मानीय विरोधी मानते थ। इस्लाम रीति रिवाज का मामला बन गया था और इस मनुष्य की आत्मा को मुक्ति दिलाने के एक साधन के रूप म मान लिया गया था। अब यह जनतांत्रिक उथल पुथल की विश्व-व्यापी शक्ति नही रह गया था। लोग पूरी निष्ठा क साथ इबादत करत थ रोजा रखत थ और कुरान का पाठ करत थ उनकी निगाह मे कानून की जो सही व्याख्या थी उसके अनुसार व अपनी जिंदगी गुजार रहे थ लेकिन नये आसमान और नयी जमीन का वह नजरिया जिसने फारस पर चढाइ करने वाले अरबियाई हमलावरो को प्रेरित किया था अब एकदम उनकी पहुच स परे की चीज हो गया। उनके अन्दर अपने मजहब के प्रचार का जोश खत्म हो गया था और अपने मजहब को अपने तक सीमित रखकर ही सन्तुष्ट हो जात थ। मुस्लिम देशो की सीमाए वहा तक रह गयी जहाँ तक उमय्या खलीफो न छोड दी थी और इस दायरे म कोई नया देश या जनता नही शामिल की गयी। इसके साथ अन्दरूनी तौर पर भी मुस्लिम जगत की राजनीतिक धार्मिक और सामाजिक एकता विघटन की शक्तियो द्वारा धीरे धीरे नष्ट हो रही थी।

(1) राजनीतिक मतभेद खिलाफत का पतन

यह विचार मुस्लिम चेतना स कभी ओझल नही हुआ कि विशुद्ध रूप स सभी मुस्लिम आबादी को खलीफा के अधिराज्य के अधीन रहना चाहिए। तो भी खिलाफत का साम्राज्य इतना विशाल था कि उसका शासन किसी एक केन्द्र

स नही किया जा सकता था और पिछले दो वर्षो के दौरान खलीफा की राज नीतिक और प्रशासनिक शक्ति म क्रमश गिरावट आती गयी। स्थानीय राजाओ ने अपन सर उठाये और हारुन-उर रशीद के दिनो म जिस तरह बगदाद स जारी खलीफा के आदेशो पर लोग पूरा पूरा अमल करते थ वह स्थिति अब नही रह गयी थी। स्पेन आजाद हो गया था, मिस्र के फातिमिदो न बगदाद की खिलाफत की बराबरी म एक और खिलाफत की स्थापना कर दी और बगदाद के नजदीक अनेक 'छोटे छोटे राजवशो के पैदा हो जान स ईराक फारस और तुर्किस्तान मे खलीफा की सत्ता ठप पड गयी। फिर भी अपन सहधर्मियो की निगाह मे खलीफा का नतिक सम्मान बहुत ज्यादा था। खलीफा को पगम्बर मोहम्मद साहब का उत्तराधिकारी माना जाता था और जनता के अन्दर उसके प्रति बेहद सम्मान था। वह सभी राजनीतिक सत्ता का मूल स्रोत था, शहशाह और सुलतान तथा कबायली मुखिया सिद्धातत उसके मातहत थ और उनकी सत्ता के वधानिक आधार के लिए उसकी रजामन्दी जरूरी थी। राजनीतिक दुस्साहसवाद के लिए उतारू पागल से पागल व्यक्ति को भी खलीफा की सत्ता का सीधे उल्लघन करने म पहल कई बार सोचना पडता था।

छोटे-छोटे राजवश

फारस और तुर्किस्तान के इन छोटे मोटे राजवशो' म जिन्होने एक-दूसरे के साथ धक्का मुक्की की सबस ताकतवर और महत्वपूर्ण सामानी राजवश था जिसकी बुनियाद अमीर इस्माइल सामानी न सन 911 ईसवी म रखी थी। सामानी राजाओ की राजधानी बुखारा म थी और ट्रासआक्सानिया (मवार उन्नहर) तथा खुरासान पर उनकी हुकूमत कायम तो थी लकिन थी काफी असुरक्षित। इन इलाको म हुकूमत को बागी गवनरो और मातहत अफसरो स तकरीबन हमेशा ही खतरा बना रहता था। जक्सार्टीज की दूसरी ओर तुर्कों और तातारो पर—जिन्होने अपना मजहब नही बदला था—उनके कबीलो के सरदारो का शासन था। इनम सबस शक्तिशाली शासक काशगर का खान था। पूर्वी फारस म सन 933 ईसवी म रुक्नुद्दौला दयलामी न बुवही म शिया राजवश की स्थापना की थी और इसकी राजधानी राय को बनाया था। इसन धीरे धीरे ईराक तक अपन साम्राज्य का विस्तार किया और यह सिलसिला तब तक जारी रहा जब तक बगदाद पर भी उसन अपना पजा नही जमा लिया। खलीफा को उसके महल के अन्दर एक सम्मानीय बदी के रूप मे मात रहन दिया गया और इस बीच बुवही शासको ने सारी हुकूमत अपन हाथ म ले ली और 'कमाडर इन चीफ' की पदवी धारण कर ली तथा राजधानी के गैर-मजहबी मामलो का निर्देशन करन लगे। अब राजवशो की सख्या इतनी अधिक थी

और वे इतने असमहत्वपूण थे कि उनका यहाँ जिक्र करना बेकार है। इन राजवशो म लगातार आपस म युद्ध चलता रहा।

(2) मजहबी भेदभाव—सुन्नी, शिया और 'धम-द्रोही'

सिद्धान्तो के प्रश्न पर जबदस्त मतभेद पैदा हुए गाया वफादार लागो की शक्ति को समाप्त करन के लिए राजनीतिक सत्ता का विभाजन पर्याप्त नही था। ये मतभेद इतन तीव्र और कटु थ जिनका अदाजा आज के मुसलमान शायद ही लगा सकें। सुन्नी और शिया के रूप म मुसलमाना का बँटवारा काफी पहल हो गया था। शिया लागा का दावा था कि पगम्बर मोहम्मद साहब का उत्तराधिकारी मोहम्मद साहब क भतीज और दामाद अली को बनाया जाना चाहिए था, जबकि सुन्नी लोगो का कहना था कि कानूनी तौर पर उत्तराधिकारी क्रम इस प्रकार होना चाहिए—अबू बक्र, उमर उस्मान और अली। लकिन धीरे धीरे इस राजनीतिक मतभेद ने और बुनियादी रूप ले लिया शिया मत मोहम्मद साहब की नसीहतो की फारसी व्याख्या और सुन्नी मत अरब व्याख्या बन गया।[1] फिर भी सुन्नियो और शियाओ के प्रमुख अग के बीच मतभद इतना तीव्र नही था जितना आगे चलकर सामने आया एक सम्प्रदाय दूसर सम्प्रदाय को मूखतापूण वर्गीकरण के जरिए किनारे करन लगा। यह कहना कठिन था कि किस बिन्दु पर सुन्नी मत समाप्त हुआ और शिया मत शुरू हुआ और उस दौर के तमाम लागो को यह समझना कठिन हो गया होगा कि व दरअसल किस सम्प्रदाय क साथ हैं। लकिन सबस ज्यादा दुश्मनी कट्टर सुन्नियो और शियाओ के उग्रवादी तत्वो क बीच बनी रही। शिया मत के उग्रवादी तत्व शिया मत के 'बारह इमामो मे स केवल सात' म यकीन रखत थे और इन्हे आमतौर पर 'धम द्रोही' (मुलाहिदा) कहा जाता था। यह उग्रवादी खेमा हालाकि कई गुटो म बँटा था जिनम स अरब के इस्माइल और मुलतान के करामाथी सबस ज्यादा बदनाम थे फिर भी इनको जोडन वाली एक चीज थी और वह थी सुन्नियो के प्रति समान रूप स नफरत। इसकी वजह यह थी कि सुन्नियो न एक तरह के धम द्रोह म फक जानने की कोशिश किय बिना सभी धम द्रोहियो का सजा दे दी थी। परम्परागत दृष्टि स देखें ता उनकी सबस बडी कठमुल्लावादी गलती यह थी कि व पगम्बर मोहम्मद साहब के परिवार को एक दवी अवतार मानत थ। लकिन हर तरह की बुराइयो के लिए उनको जिम्मेदार ठहराया गया और यह उनका वास्तविक धार्मिक विश्वास नही था बल्कि काल्पनिक नतिक चरित्र था जिसन कट्टर लोगो का उन्मत्त असहिष्णुता को भडकाया। उन पर आराप लगाया गया कि उन्होने अपन गोत्र म शादी करने की अनुमति दी और उस सीमा तक शादी का कानूनी ठहराया जहाँ पाबन्दी थी। उनका और भी ज्यादा सचाई

के साथ इस बात के लिए दोषी ठहराया गया कि उन्होंने राजनीतिक हथियार के रूप मे हत्या का सहारा लिया और धम निरपेक्ष राज्य क स्थान पर धम द्रोही महन्तशाही' स्थापित करन की कोशिश की। जहाँ कही कोई धम द्रोही मिल जाता था, उस हलाल कर दिया जाता था, नियमत साधारण मृत्यु-दण्ड को बहुत हलकी सजा माना जाता था और यदि कोई 'धम द्राही क्रुद्ध भीड द्वारा टुकडे टुकडे किय जान के भय स बच निकलता था तो सरकार उस पर भीषण जुल्म ढाता थी और उस तरह तरह स यन्त्रणा दा जाता थी। इस बेवकूफी भरी सजा का जवाब 'धम द्राहियो न हथियारो स दिया जो हमेशा सकल्पशील अल्पमत क पास हाता है। उन्होंने गुप्त समितियो का गठन किया जिनका सरकार की भारी खुफिया व्यवस्था भी पता नही लगा सकी, हालाकि सरकार क प्रचारक (दाय) अलग अलग भेष धारण कर मुस्लिम जगत के चप्प चप्प पर फल हुए थ। इन धम-द्राहिया की ताकत और भी बढती गयी और उन्होन मिस्र म एक दूसरी खिलाफत कायम की, तीथ-स्थाना पर कब्जा कर लिया और मक्का की पवित्र दरगाह स काला पत्थर हटा दिया। अन्तत उन्होंने फारस के अनक क़िला पर कब्जा कर लिया जिनम प्रमुख अलामुत था, हत्या को एक ललित कला का दर्जा द दिया, और, सुन्नी शासको राजनेताओ तथा धम गुरुआ को कतल कर रह धम द्राहिया' क अदृश्य छुरे स मौत के निरन्तर भय क शिकंजे म जकड दिया। यह एक नगा नाच था, फिर भी यह 13वी सदी के मध्य तक तक जारी रहा, जब तक कट्टर और 'धम द्राहा तत्व —दोनो मगाल विजेताओ के आतक स पराभूत हान पर मजबूर नही हा गय।

(3) नस्लगत विभाजन—फारसी, अरबी और तुर्क

मक्का मे अपना आखिरी तकरीर मे हजरत पगम्बर न कहा था 'यह तुम सबको मेरी आखिरी सलाह है कि तुम एक बिरादरी के हा। और, मुसल माना क विश्वास का कोई अय सामाजिक सिद्धात नही है जिसक प्रति व इससे ज्यादा निष्ठावान हा मजहबी एकता न हमेशा कबाइली और नस्ली भेद भाव का दबा दिया है। फिर भी नस्ली प्रभुत्व स्थापित करन की खुलकर कोशिशें की गयी, हालाकि उनम कामयाबी नहीं मिली। मुस्लिम दशा म भी अय देशो की तरह नस्ली गौरव मानव स्वभाव का एक असुविधाजनक पहलू रहा है। उमय्या खलीफों न साम्राज्य का अरब अभिजात-तन्त्र की विरासन के रूप म तबदील करन का एक साहसिक प्रयाग किया, फारस की क्राति न—जिसन उमय्या खलीफा का तख्ना पलट दिया और अब्बासी खलीफा का गद्दी पर बिठाया—स्वाभाविक तौर पर अरब-साम्राज्य का खात्मा कर दिया और इस प्रकार अरब लागो को अब तक जा बडप्पन मिला था वह अब फारस के लागो के हिस्स मे

आ गया। लेकिन जल्दी ही विजेता फारसवासियों से होड़ लेने के लिए एक जाति और सामने आ गयी। पश्चिम में अनातोलिया के दलदली इलाके में लेकर पूरब में *प्रशान्त महासागर के तटवर्ती इलाकों तक चीनी मंगोल नस्ल की विभिन्न* जन जातियाँ---तुर्क तातार, तुर्कमान, तिब्बती चीना और मंगोल—फैली हुई थी जिनमें कुछ बहुत स्पष्ट एक जैसी खूबियाँ थी। उनकी समान लिपि थी जो ऊपर से नीचे की ओर लिखी जाती थी। उनका कद छोटा था गाल की हड्डियाँ उभरी हुई थी और आँखें छोटी थी लेकिन उनके शरीर का गठन अदभुत रूप से बहुत अच्छा था और युद्ध की कठिनाइयों का आदी था। उत्तर में और फारस के पश्चिम में मुस्लिम सीमा के विस्तार के साथ एक के बाद एक तुर्क कबीला इस्लामी सीमा के अन्दर आता गया और तुर्कों ने अपने मर्दों की बहादुरी से तथा अपनी औरतों की अदभुत खूबसूरती से इन विजेताओं को हैरानी में डाल दिया। शासकों की सुरक्षा के लिए तुर्की अंगरक्षकों को नियुक्त किया गया, तुर्की लड़कियों को गुलाम बनाकर उनके जिस्म का इस्तेमाल करने के लिए शाही हरम में डाल दिया गया। लेकिन धीरे धीरे पर निश्चित रूप से तुर्की बहादुरों ने सैनिक कमान के सभी स्थलों से फारसी लोगों को हटा दिया। दसवीं सदी के मध्य तक क्रान्ति पूरी हो गयी और मोटे तौर पर कह तो तुर्कों को मुसलमानों में वही दर्जा मिल गया जो हिन्दुओं में क्षत्रियों को प्राप्त था। एक आम नागरिक की निगाह में भी राजनीतिक नैतिकता का यह अटल नियम मान लिया गया कि किसी मुस्लिम प्रदेश की हुकूमत तुर्क का ही करनी चाहिए या लड़ाई के मैदान में तुर्क को ही सेनापति की भूमिका अदा करनी चाहिए। दसवीं से लेकर अठारहवीं सदी तक जिन राजवंशों ने मुस्लिम एशिया पर हुकूमत की उनमें से एक बहुत बड़ी तादाद तुर्कों की थी।[3] प्रशासनिक पदों पर अभी भी फारसियों को ही रखा जाता था और इनका कला तथा साहित्य पर खास एकाधिकार था जबकि तुर्कों ने इसमें कभी ज्यादा रुझान नहीं दिखाया। किसी फारसी का न तो शूद्र की तरह समझा जाता था और न उसे गुलाम जाति का ही माना जाता था राज्य में उसकी जिम्मेदारी अलग थी लेकिन उसकी सामाजिक हैसियत उतनी ही सम्माननीय थी जितनी किसी तुर्क की। तो भी तुर्क लोगों के सैनिक दबदबे का एक अँधेरा पहलू भी था तुर्की शासक कितना भी सहनशील क्यों न हो ऐसा लगता था कि उसकी सरकार जरूरत के लिए हमेशा कमरबन्द तैयार बैठी है और राजनीति में गौण स्थान पाने के लिए विवश फारसी प्रतिभा को कट्टर तुर्कों के खिलाफ मजहबी आन्दोलन संगठित करके ही अपनी शक्ति का इस्तेमाल करना पड़ता था।

इसने विचार के क्षेत्र में इंडो-परशियन प्रतिभा की सर्वोत्तम उपलब्धि के रूप में तसव्वुफ़ को जन्म दिया।

2 यहाँ हमें कारमेथियनों और इस्माइलियों का विस्तृत अध्ययन नहीं करना है। उनके आदर्श और उनके संगठन समान रूप से दिलचस्प हैं। ऐसा लगता है कि सभी क्रान्तिकारी पादरियों की तरह उन्होंने हकीम नासिर खुसरो जैसे सहिष्णु दार्शनिकों से लेकर एकदम हत्यारों और क़ातिलों तक को अर्थात हर विचारधारा के लोगों को शामिल किया है। अपने सियासतनामा में निज़ामुलमुल्क ने उन्हें मुसलमानों से पहले का फ़ारसी सम्प्रदाय कहा जिसकी बुनियाद हज़रत पैग़म्बर से एक पीढ़ी पूर्व मज़्दक ने रखी थी और जो इस्लाम तक बना रहा। अलामत (चील का घोंसला) का क़िला और उसका नक़ली बहिश्त एक रहस्यमय आवरण में घिरा है जहाँ से पहाड़ का बड़ा व्यक्ति अपने विरोधियों की हत्या के लिए नौजवानों को भेजा करता था। 'असासिन' (हत्या) शब्द 'हशिश' (गाँजा) से बना है जिसके ज़रिए बहिश्त में भेजने से पहले षड्यन्त्रपूर्ण जान में फँसे शिकार को इसका सेवन करा कर नशे में धुत कर दिया जाता था। कहा जाता है कि उसकी कल्पना में इसकी हूरों का ऐसा असर होता था कि बाहरी दुनिया में उसकी रूह को सुकून नहीं मिलता था और यह वायदा कि किसी बहादुराना काम के ज़रिए वह फ़ौरन बहिश्त में पहुँचेगा—उसे हत्यारे को चाकू चलाने के लिए प्रेरित करने और कट्टरपन्थी के हाथों सज़ा पाने के लिए काफ़ी था। चंगेज़ ख़ाँ के पौत्र हलाकू ने इस क़िले को तहस-नहस किया। इस विषय पर अध्ययन के लिए सियासतनामा के अलावा 'रौज़तउस्सफ़ा' का धर्मद्रोहियों वाला अध्याय और तारीख़-ए-गुज़ीदा देखें। अलाउद्दीन अता मलिक जुवैनी की पुस्तक तारीख़े जहाँगुशा अलामत लाइब्रेरी के आधार पर लिखी गयी थी।

3 इस धारणा का प्रचलन कि मध्य भारत के शासक पठान थे एक सबसे बड़ी ऐतिहासिक भूल रही है। इस धारणा की शुरुआत जनरल ब्रिग्स ने की थी जो महामूर्ख अनुवादक और झूठी शेखी बघारने वाला इतिहासकार था। खिलजी शासकों को अलग कर दें तो सैयद, लोदी और सूरी वंशों को छोड़कर दिल्ली के सभी राजवंश तुर्की नस्ल के थे। ग़ज़नी और ग़ोर के सुल्तान, गुलाम वंश, तुग़लक़ वंश और महान मुग़ल वंश—सभी तुर्क मंगोल नस्ल के थे। अहमद शाह अब्दाली के शासनकाल से पूर्व अफ़ग़ानिस्तान पर किसी अफ़ग़ान शासक का राज्य एक विडम्बना ही होता!

अध्याय 2

सुलतान महमूद का जीवन-काल

अलप्तगिन

सन 962 ईसवी मे बुखारा के सामानी बादशाह अब्दुल मलिक की मृत्यु हो गयी और उसके भाई तथा चाचा दोनो ने उस तख्त पर अपने हक का दावा किया। खुरासान के गवर्नर अलप्तगिन से राजधानी के अमीरो ने सलाह मशविरा करके अब्दुल मलिक के चाचा को शासन सौंपने की राय दी, लेकिन उनके संदेश वाहक के बुखारा पहुचने से पहले ही अमीरो ने आम सहमति से मलिक के भाई को गद्दी पर बिठा दिया। अलप्तगिन ने यह महसूस करते ही कि उसने गलत घोडे की पीठ थपथपायी थी वफादारी और दूरदर्शिता से काम लिया। खुरासान को उसके वैधानिक शासक सामानी राजा के लिए छोडकर उसने अपने निजी अनुचरो का लश्कर गजनी के लिए कूच किया गजनी के शासक अबू बक्र लाविक को खदेड दिया और अपनी नयी हुकूमत को उखाडने की मंसूर की कोशिश को नाकामयाब कर दिया। 969 ई० मे अलप्तगिन की मृत्यु हो गयी। उसने आठ साल तक खूब शान शौकत के साथ हुकूमत की और इस दौरान उसका सेनापति सुबुक्तगिन हिंदुस्तान की सरहद के पास चक्कर लगाता रहा। अलप्तगिन की मृत्यु के बाद उसका लडका अबू इसहाक गद्दी पर बैठा लेकिन उसकी हुकूमत का अभी एक साल भी नही गुजरा था कि वह चल बसा। उसके बाद अलप्तगिन के तीन सेनापति एक के बाद एक गद्दी पर बैठे। इनमे से पहला सेनापति बिलक्तगिन (969 977) एक बहादुर और नेक इंसान था लेकिन उसका उत्तराधिकारी पिराई (977) एक बहुत दुष्ट व्यक्ति साबित हुआ और उसका तख्ता पलट दिया गया, जिसके बाद मशहूर सेनापति सुबुक्तगिन को गद्दी मिली।[1]

सुबुक्तगिन

अमीर नसीरुद्दीन सुबुक्तगिन समूचे साम्राज्य मे वर्षों म अत्यत मशहूर हो चुका था जब पिराई की दुष्टता से ऊबी हुई जनता ने 977 ई० म उस अपना राजा बनाया। उसन अत्याचार की बुनियाद का उखाड फेंका और समूची रियासत मे न्याय और दया का वातावरण तयार किया। एक बात जो कम अहमियत नही रखती वह यह है कि उसने जपसग का अपने अधिकार म रखा और उसन हमला करके फतह हासिल करन का अपना सिलसिला शुरू किया जिस दुनिया के पूर्वी हिस्स जानन लग। शासन सभालन के साथ ही उसने बस्ट और कमदार के इलाका का अपन साम्राज्य म मिला लिया तथा हिदुस्तान की सरहद की आर बढा और उसन कुछ किला पर कब्जा कर लिया तथा कुछ मस्जिदें बन वायी (978 ई०)। यह बस ता एक मामूली बात थी पर इसक नतीजे महत्त्व पूण थ।

जयपाल क साथ पहला युद्ध

आठवी सदी तक अफगानिस्तान राजनीतिक और सास्कृतिक दृष्टि स भारत का एक हिस्सा था और यहा के निवासियो न बौद्ध धम को अपना लिया था। लकिन इस्लाम की सीमाए अब धीरे धीरे देश स बाहर की ओर बढ रही था और ऐसी हालत म काबुल नदी के दक्षिणी तट पर लमगान प्रदश म दोना ताकतें एक दूसर के खिलाफ आमन सामने खडी हो गयी थीं। पजाब का अधिपति—लाहौर का राय जयपाल अपन पूवजा क इस साम्राज्य क धीर धीरे छोटे होत जान स हताश हो उठा था। सुबुक्तगिन क बार बार क हमला ने उसका जीवन दूभर कर दिया था। आखिर उसन सोचा कि इस मामले को अतिम तौर पर तय कर ही लिया जाना चाहिए और यह सोचकर वह रात की तरह काल और प्रपात की तरह तज सनिको का लकर लमगान घाटी की ओर चल पडा। सुबुक्तगिन अपने लडक महमूद क साथ गजनी स रवाना हुआ। कई दिना तक लडाई चलती रही पर हार जीत का फसला कर पाना मुश्किल था। फिर अचानक एक बमौसम की बर्फीला आँधी आयी जिसने जयपाल की सारी योजना को चर चूर कर दिया।[3] अचानक आसमान बादलो स भर गया बिजली चमकने लगी और बादला की गडगडाहट सुनायी देने लगी। दिन म ही रात जसा अँधेरा हो गया और इतना भयकर ठड पडी कि अधिकाश घाडे और सामान ढोने वाले जानवर मर गय और हिदुआ का खन उनकी नसा म जमकर रह गया। अपमान भरे आत्मसमपण क अलावा दूसरा कोई चारा नही रह गया और जयपाल ने उस भयकर ठड म लडाई जारी रखन वाल अपने दुश्मन स वायदा किया कि वह 10 लाख दिरहाम और पचास हाथी दगा।

का यह उसूल नहीं था कि एक बार अपनी पकड़ में आ गयी चीज को वह छोड़ दे।

अमीर इस्माइल

बीस वर्ष तक शासन करने के बाद अमीर सुबुक्तगिन की सन 997 ई० में बलख में मृत्यु हो गयी और उसकी इच्छा के अनुसार उसके पुत्र इस्माइल को राजगद्दी पर बिठाया गया। लेकिन महमूद इस बात के लिए नहीं तैयार था कि उसका छोटा भाई उसे बेदखल करके गद्दी पर बैठ जाय और इस्माइल भी किसी *उचित समझौते पर सहमत होने के लिए तैयार नहीं था। फलस्वरूप गृह-युद्ध* की स्थिति आ गयी। महमूद ने अपनी सेना के साथ नेशापुर से गजनी की ओर कूच किया और दूसरी तरफ इस्माइल गजनी को बचाने के लिए बलख से तेजी से रवाना हुआ। राजधानी के पास दोनों भाइयों की मुठभेड़ हुई। महमूद के हमले ने इस्माइल की मुख्य सेना को पराजित कर दिया और चाहे जैसी कठोर दिल वाली तलवार योद्धाओं की किस्मत पर खून के आंसू बहाती रही। इस्माइल को जुर्जान के किले में कैद रखा गया और उसे वे सारी चीजें दी गयीं जो आरामदेह जिन्दगी गुजारने के लिए जरूरी होती है।

अमीर महमूद—व्यक्तित्व और चरित्र

30 वर्ष की उम्र में राजगद्दी पर बैठने वाले इस नये अमीर ने अपनी अद्भुत उपलब्धियों से अपने समकालीनों को चकित कर दिया। उसने पंजाब से कस्पियन सागर तक और समरकन्द से राय तक साम्राज्य का विस्तार किया जो थोड़े ही समय तक बना रह सका। अब्बासी खिलाफत के पतन के बाद से ही मामूली हैसियत और सामान्य कल्पनाओं वाले लोग भी एक ऐसे प्रमुख के लिए प्रयत्न करने लगे थे जो एकदम उनकी पहुंच से परे की चीज था। इन लोगों को ऐसा लगा कि महमूद के रूप में उनको वह व्यक्ति मिल गया है जिसकी वे बहुत दिनों से आस लगाये थे। फारस और तुर्किस्तान के शासक उसका नाम सुनकर कांपने लगते थे और सुबुक्तगिन का वह रहस्यमय स्वप्न पूरा हो गया जिसमें वह देखा करता था कि उसकी अँगीठी से एक पेड़ उगकर सारी दुनिया को अपने साये के नीचे ले रहा है। लेकिन लगातार 40 वर्ष तक युद्ध में रत रहने वाले व्यक्ति के कभी पराजित न हो पाने की प्रतिभा से उस समय के लोग इतने चमत्कृत हो गये थे कि उन्होंने कभी उसके अस्थायित्व के बारे में सोचा ही नहीं। दूसरी तरफ आने वाली पीढ़ियों के लिए महमूद एक कथा पुरुष और यादगार बन गया। बाद के वर्षों के धर्मांधों ने उसे अपने दिल के सरताज के रूप में चित्रित किया और उसे 'खुदा की राह पर' चलने वाला धार्मिक योद्धा बताते हुए कहा कि सभी पवित्र मुस्लिम

बादशाह को उसके बताये हुए रास्ते पर चलने की ख्वाहिश करनी चाहिए। दूसरी तरह के नैतिकतावादियों ने उसे ईमानदारी और सचाई का नहीं बल्कि व्यक्तिगत लालच का उदाहरण बताया, एक ऐसे लोभी के रूप में उसका चित्रण किया जो भौतिक सुख-सुविधाओं के साधनों से चिपका रहता था—उन सुख सुविधाओं से जिन्हें उसने "इतनी मेहनत से प्राप्त किया था इतनी मेहनत से उन्हें बनाये रखा था और जिनका खो जाना ही नियति थी।' फिर भी गजनी के इस धूर्त और शराब प्रिय सुलतान का कोई मुकाबला नहीं था। वह न तो धर्म प्रचारक था और न कट्टर मुसलमान। एक चालाक आदमी की तरह उसकी निगाह हमेशा अपने मुनाफे पर टिकी रहती थी और अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए उसने समान रूप से हिंदू और मुसलमान—दोनों से लड़ाइयाँ लड़ीं। लेकिन उसकी निष्ठा न तो कभी लोकोत्तर मनोवेगों की ऊँचाइयों तक पहुंची और न ही उसकी कंजूसी कोई रोग बन सकी। किसी कंजूस व्यक्ति की तरह वह कभी अपने खजाने को देखकर तुष्ट नहीं हुआ लेकिन अपनी सरकार की आर्थिक स्थिरता को बनाये रखने के लिए उसने अपने खजाने को हमेशा अक्षुण्ण रखा।

महमूद को ऐसा डील डौल नहीं मिल सका था जो रौब दाब वाला हो। उसका कद औसत गठीला था लेकिन चेहरे पर चेचक के दाग होने से उसकी खूबसूरती चली गयी थी। कहा जाता है कि एक बार आइने में अपना चेहरा देखते हुए बड़े निराश स्वर में उसने अपने वजीर से कहा कि बादशाह का चेहरा देखकर लोगों की आंखों की रोशनी तेज होती है पर मेरे जैसा चेहरा यदि कोई देखे तो उसकी आंख ही खराब हो सकती है। उसके इस कथन पर हाजिर जवाब वजीर ने फौरन कहा कि 'आपका चेहरा हजार में कोई एक ही देखता है लेकिन आपके नैतिक गुणों का सब पर प्रभाव पड़ता है। आप अच्छाई के रास्ते पर चलते रहिये तो आपको सबका प्यार मिलेगा। महमूद कोई पहलवान नहीं था व्यक्तिगत पराक्रम के असाधारण कार्य उसकी शक्ति से परे थे, हालांकि उसके शारीरिक गठन पर कई मार चिह्न मौजूद थे जो निरन्तर युद्ध की कठिनाइयों से पैदा हुए थे। लेकिन वह अपने अभियानों के दौरान खुद को तब तक बहुत दिक्कत में नहीं डालता था जब तक एकदम जरूरी न हो और अभियान के दौरान उसकी सेना का जब कहीं पड़ाव होता था तो उसकी शान शौकत से लोग दंग रह जाते थे। वह एक ऐसा सेनापति था जो व्यर्थ की बहादुरी में अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा को कभी खतरे में नहीं डालता था। फिर भी यदि जरूरत पड़ती थी तो वह एक हाथी पर सवार होकर बहादुरी के साथ दुश्मनों के बीच पहुंच जाता था, भले ही दुश्मनों की तादाद कितनी भी क्यों न हो। अपने साथ के लोगों पर उसका असंदिग्ध रूप से दबदबा था।

थी। इसके अलावा यह मानना ज्यादा ठीक होगा कि उसके अपने दास अहमद हुसन बिन मकन (मनाक) के समझदारी न भरे रुझान से इनकार किया। उसका यह दास्त रहस्यमयी करमाम नहीं बाता पर विश्वास नहीं करता था। खलीफा की नाराजगी से इस दास्त की रक्षा करने में महमूद ने जिस दृढ़ता का परिचय दिया उससे इस धारणा की पुष्टि होती है। सुलतान के अंतरंग जीवन का देखने से पता चलता है कि वह कट्टर भी था पर मुस्लिम धर्मांधों द्वारा सराहे जाने वाले गुणों और व्याख्या का प्रतिरूप नहीं था। अपने पूर्ववर्ती और अपने बाद के शासकों की तुलना में नैतिक दृष्टि से वह न तो अच्छा ही था और न बुरा। और का भी तरह उसे भी युद्ध, शराब और औरतों का शौक था और वह शायरी तथा संगीत पसंद करता था। तुर्की गुलामों का रखने के बारे में वह भी अपने अफगान से ...ता या और उसकी नाजायज संतानों के बारे में भूरे सच्चे किस्से प्रचलित थे।[6] लेकिन इतिहासकार का मुख्य सरोकार महमूद का अंतरंग जीवन नहीं है बल्कि उसके काम का स्वरूप और उसका मूल्यांकन है।

सामानी साम्राज्य का अंत

बुखारा के अमीर नूह का उसी वर्ष मृत्यु हुई जिस वर्ष सुबुक्तगिन की हुई। उसके बेटे मंसूर ने खुरासान के गवर्नर के पद पर बगतूजुन नामक व्यक्ति को नियुक्त किया और जिस समय महमूद ने इस्माइल से बदला लेना चाहा था बगतूजुन ने खुद को नैशापुर में स्थापित कर लिया। महमूद के विरोध की अवहेलना की गयी और जब उसने नैशापुर की ओर कूच किया तो मंसूर उसकी रक्षा में तत्पर हो गया। सामानी शासक ने मुकाबले महमूद ज्यादा बलशाली था लेकिन उसने यह सोचकर युद्ध नहीं किया कि अपने अधिपति की अवहेलना करने की बदनामी उसके साथ जुड़ जायगी। लेकिन दुर्भाग्यवश में बगतूजुन ने उसी बदमाश फायक के साथ मिलकर मंसूर को पकड़ लिया और उसे अंधा कर दिया तथा उसके नाबालिग भाई अब्दुल मलिक को सामानी तख्त पर बैठा दिया। महमूद अब कुछ भी करने को आजाद था। उसने गुरासान से दुश्मन का सफाया कर दिया और अब्दुल मलिक भागकर बुखारा चला गया। लेकिन काशगर के ईलक खान ने—जो अफरातफरी के पार में सारी घटनाओं को ताकता ले रहा था—बुखारा की तरफ कूच किया और सन 999 ईसवी में उसने सामानी राज्य का मिटा दिया। ईलक खाँ और महमूद ने एक-दूसरे का बधाई दी और सामानी राज्य का आपस में बाँट लिया—बीच में आक्सस को दोनों राज्यों की सरहद बना दिया गया। इस राजनीतिक गठबंधन को पारिवारिक गँठजोड़ से और मजबूत कर दिया गया और इस राज्य के अंत तक से आगे मध्य में तातारों का इस्लाम

म दीक्षित किया गया।

सन 999 ईसवी के अन्तिम दिनो म प्रथम मुस्लिम शासक महमूद को सुलतान की पदवी मिली खलीफा म उसे अमीनुलमिल्लत और यमीनुद्दौला की मानक उपाधिया मिली। अब वह अपने पुराने स्वामियो सामानी शासको की श्रेणी म आ गया---वह सीधे-सीधे खलीफा क मानहत हो गया और अपने नये पद की जिम्मेदारियो को स्वीकार करन के रूप म उसने शपथ ली कि वह प्रति वर्ष हिन्दुओ के खिलाफ धर्म-युद्ध छेडेगा। हालाँकि इसके बाद शेष बचे 30 वर्ष म उसने हिन्दुस्तान पर केवल 17 बार हमला किया लेकिन यह मानना पडेगा कि उसने जिस भावना म शपथ ली थी उसे पूरा करन म कोई कसर नही छोडी।

(1) सरहदी शहर (1000 ई०)

सन 1000 ईसवी म महमूद ने भारत की सीमा को पार किया लेकिन कुछ किलो पर कब्जा करन के बाद पीछे हट गया।

(2) पशावर और वाहिन्द (1001-1002 ई०)

अगले वर्ष (1001 1002 ई०) उसने फिर धावा बोला और दस हजार घोडो के साथ उसने पेशावर स पहले अपने खेमे गाड दिये। दूसरी तरफ़ से राय जयपाल 12 हजार घोडो 30 हजार पैदल सैनिको और तीन सौ हाथियो के साथ मुकाबला करने के लिए बढा। 28 नवम्बर 1001 ई० को दोनो सेनाओ म मुठभेड हुई और उन्होंने युद्धोचित साहस की परम्परा का निर्वाह किया।[6] लेकिन राय जयपाल 15 राजकुमारो के साथ बन्दी बना लिया गया और पाँच हजार हिन्दू इस युद्ध म मारे गये। महमूद अपनी सेना के साथ आगे बढा और उसने जयपाल की राजधानी वाहिन्द (या उन्द) पर जहाँ दूसरी बार युद्ध के लिए कुछ हिन्दू इकट्ठे हुए थे कब्जा कर लिया। जयपाल और दूसरे बन्दी फिरौती देकर रिहा हो गये पर पराजित जयपाल ने अपने यहाँ की परम्परा के अनुसार सत्ता की बागडोर आनन्दपाल को दे दी और खुद जलती चिता म अपने को अर्पित कर दिया।

(3) भेरा का बीजी राय (1006-1007 ई०)

अगले दो वर्ष तक महमूद अपने राज्य के पश्चिमी इलाके म सम्बन्धित मसलो म और सीस्तान की विजय म लगा रहा। सन 1006 दुग्वा की शरद ऋतु म उसने पंजाब वा सिन्धु का पार किया और झेलम के तट पर भेरा के सामने आ पहुँचा। भेरा के बीजी राय ने जिसके पास शानदार और मजबूत हाथी थे और जिसने कभी सुबुक्तगीन या जयपाल को सम्मान देने की परवाह

नहीं की, अपने किले से बाहर निकलकर युद्ध के लिए ललकारा। तीन दिनों तक घमासान लड़ाई चलती रही, मुस्लिम सैनिकों की हालत खराब हो गयी। लेकिन चौथे दिन जब सवेरे से लेकर दोपहर तक युद्ध किसी फैसले पर नहीं पहुंच सका तब हताश होकर महमूद ने खुद ही एक तरफ से धावा बोला और बीजी राय की मुख्य सेना-पंक्ति को तोड़ दिया। बीजी राय अपनी अस्त व्यस्त सेना के साथ किले की ओर भागा। महमूद किले को घेरकर बैठ गया। घबराहट और भय का शिकार बीजी राय रात में किले से निकलकर भागा, लेकिन उसे महमूद के सैनिकों ने चारों ओर से घेर लिया। अंततः बीजी राय ने अपने सीने में छुरा घोंपकर खुद को जीते जी बन्दी बनाने से बचा लिया। भेरा शहर और उसके अधीनस्थ इलाके गजनी साम्राज्य में मिला लिए गए और महमूद 280 हाथियों तथा लूट की अन्य चीजों के साथ लौट आया।[8]

(4) मुल्तान पर पहला हमला (1004-1005 ई०)

आठवीं सदी के प्रारम्भ में मोहम्मद बिन कासिम द्वारा विजित सिन्ध प्रान्त महमूद के उदय से लगभग एक सौ वर्ष पहले करमाथी (कारमेथियन) अपधर्म में रूपांतरित हो गया था। उस युग की धारणा के अनुसार 'धर्म द्रोही भी धर्म युद्ध के उतने ही उपयुक्त पात्र थे जितने नास्तिक'। उनकी सिन्ध के शासक शेख हामिद लोदी ने समय-समय पर तोहफे देकर सुबुक्तगिन को खुश रखा था लेकिन उसके पौत्र अबुल फतह दाऊद ने अपने दादा की इस सतर्क नीति को छोड़ दिया। यह सोचकर कि भेरा का पतन होने से मुल्तान पर हमला करने के लिए महमूद का खुला रास्ता मिल जायगा उसने बीजी राय की मदद करने की असफल कोशिश की—यह एक ऐसा काम था जो पूरी तरह अनुचित और नासमझी का था। महमूद ने दाऊद के इस काम से उस समय आँखें मूंद लीं, लेकिन इसके अगले वर्ष ही (1005 1006 ई०) वह कारमेथियन धर्मानुयायी दाऊद के खिलाफ धर्म-युद्ध छेड़ने के लिए चल पड़ा। घबराहट में दाऊद ने जयपाल के पुत्र आनन्दपाल से मदद की अपील की और आनन्दपाल ने महमूद की सेना को आगे बढ़ने से रोकने की एक बहादुराना कोशिश की। लेकिन महमूद दो बहिश्तों का यश प्राप्त करना चाहता था और उसने धर्म द्रोही से पहले हिन्दू राजा से लड़ना उचित समझा। आनन्दपाल के सैनिक पीछे खदेड़ दिये गये और राय आनन्दपाल खुद पहाड़ियों और घाटियों को लाँघता फाँदता चनाब तक पहुंचा। इस प्रकार मुल्तान पर हमले के लिए रास्ता साफ हो गया। दाऊद खुले आम सीधी लड़ाई लड़ने की हालत में नहीं था। उसने खुद को किले में बन्द कर लिया और सात दिनों तक महमूद की सेना के घेरे में रहने के बाद उसने वादा किया कि वह अपना धर्म छोड़कर कट्टरपंथियों के धार्मिक कायदे कानूनों

(शरीयत) का पालन करेगा और सालाना खराज के रूप में 20 000 दिरहाम देगा। लेकिन अभी यह सुलहनामा पूरा भी नहीं हो पाया था कि महमूद को अपनी राजधानी पर खतरे की खबर मिली और पूरब से तुर्कों के हमले से अपने देश को बचाने के लिए वह फौरन वापस रवाना हो गया।

खुरासान पर ईलक खां का हमला—बलख की लड़ाई

सन 999 ईसवी में ईलक खां और महमूद ने सामानी राज्य के समान बटवारे के आधार पर एक गठबंधन किया था। लेकिन इसके बावजूद आक्सस के पार की उपजाऊ ज़मीन पर इलक खां की लालच भरी नजर लगी रही। 1004 1005 ईसवी में जब महमूद काफी दूर मुल्तान में था ईलक खां को हमला करने का मौका मिल गया। उसने खुरासान और बलख को रौंद डाला। हरात में महमूद के राज्यपाल अर्सलन हजीब को वापस गज़नी लौटने पर मजबूर किया। लेकिन ईलक खां ने अपनी सैनिक शक्ति का ध्यान में नहीं रखा। जितने दिनों की उम्मीद थी उससे काफी पहले ही महमूद फिर गज़नी वापस पहुंच गया। उसकी ज़बरदस्त शक्ति को देखकर उसके उन अफसरों का भी हौसला बढ़ा जो हिम्मत हार चुके थे। सेना को असाधारण तेज़ी से पुनर्गठित किया गया और महमूद ने बलख के पास अपनी पूरी ताकत के साथ हमलावर का मुकाबला किया। महमूद ने जितनी कुशलता के साथ अपनी व्यूह रचना की उससे पता चलता है कि दुश्मन का आतंक कितना प्रबल था। शुरू में तुर्क हमलावर हावी रहे पर अंत में खुद महमूद के नेतृत्व में गज़नवियों ने दुश्मन को भगा ही दिया। भागते हुए दुश्मन का महमूद ने पीछा किया पर भयंकर ठंड के कारण आक्सानिया पार के निर्जन इलाके में लड़ाई चलानी असम्भव हो गयी और दूसरी तरफ अचानक हो गयी बगावत ने एक बार फिर महमूद का ध्यान हिंदुस्तान की तरफ खींच लिया।

(5) सुखपाल (1005 ई०)

सिंध के पूरब की ओर भेरा ही एकमात्र इलाका था जो महमूद के कब्ज़े में था। मुल्तान से लौटते समय उसने सुखपाल (नवासा शाह) को भेरा का गवर्नर बनाया था। सुखपाल आनन्दपाल का लड़का था जिसने इस्लाम को अपना लिया था। महमूद को तुर्कों के साथ घमासान युद्ध में लगा देखकर सुखपाल के अन्दर अपने हिंदुत्व की भावना फिर भड़की और उसने महमूद के अफसरों को अपने यहां से निकाल बाहर किया। बलख की लड़ाई के बाद महमूद ने भेरा की तरफ कूच किया लेकिन उसके भेरा पहुंचने से पहले ही सरहदी इलाके के अमीरों ने सुखपाल को पकड़ लिया और बन्दी सुखपाल को शाही खेमे तक पहुंचा दिया।

उस 4,00 000 दिरहाम की वह सारी राशि छोड़नी पडी जो उसने जमा की थी और आजीवन कैद की सजा काटनी पडी।

(6) आनन्दपाल और हिन्दू राज्य-संघ—आहिन्द की दूसरी लडाई नगरकोट (1008-1009 ई०)

सामरिक दृष्टि से भेरा के महत्व को देखें तो पता चलता है कि सुखपाल ने क्या बगावत की थी और महमूद को क्या इस बात की चिन्ता थी कि हिन्दुस्तान की रक्षा सेना पहुंचने से पहले ही उस पर फिर से कब्जा कर लिया जाय। भेरा पर अपने पाँव जमाकर वह दक्षिण में मुल्तान पर या पूरब में आनन्दपाल पर हमला कर सकता था। मुल्तान तो उनके परो तले दबा पडा था, पर उस तबाह और कंगाल रियासत से कुछ खास हासिल नहीं होना था। हिन्दुस्तान के रास्तों पर आनन्दपाल का कब्जा था, पर आनन्दपाल के साथ महमूद के सम्बन्ध पहले से ही तनावपूर्ण थे। मुसलमानों के प्रति आनन्दपाल के मन में उसी समय से 'जबरदस्त नफरत' पैदा हो गयी थी जब से पेशावर (1001 1002 ई०) में उसके लडके सुखपाल को कैद किया गया था। उसने महमूद की सेना को मुल्तान की ओर कूच करने से रोका था इसलिए महमूद को जंग का ऐलान करने का कानूनी तौर पर एक बहाना मिल गया था पर जिस समय वह काशगर की सेना से लडाई के दौरान विकट स्थिति में फँस गया था, आनन्दपाल ने उसे मदद करने का बहादुराना सन्देश भिजवाया। आनन्दपाल की इस हिम्मत की तारीफ दार्शनिक अलबरूनी ने भी की है। आनन्दपाल ने अपने खत में लिखा था मुझे पता चला है कि तुर्कों ने आपके खिलाफ बगावत कर दी है और वे खुरासान में फैलते जा रहे हैं। अगर आप चाहें तो मैं 5 000 घुडसवारों 10 000 पैदल सैनिकों और 100 हाथियों के साथ आपकी मदद को आ जाऊं या मैं तो इससे दुगुनी तादाद के साथ अपने लडके को आपकी मदद के लिए भेज दूं। मुझे नहीं पता कि इन बातों से आपको क्या धारणा बनेगी। मैं आपके हाथों हार चुका हूँ और मैं नहीं चाहता कि किसी दूसरे आदमी के हाथों आपको मात खानी पडे। फिर भी इस खत का असर यह तो हुआ ही कि अगले तीन सालों तक अमन चैन बना रहा। लेकिन आनन्दपाल के मजबूत और आजाद बने रहते महमूद और उसके बीच मुस्तकिल तौर पर अमन चैन कायम रहना नामुमकिन था। सुल्तान महमूद अभी तक एक महाद्वीपीय देश की सीमान्त हो छू सका था और लूट में उसे जो कुछ मिला था वह नहीं के बराबर था। सतलज के उस पार वे मंदिर थे जिनमें धार्मिक हिन्दुओं की पीढी दर पीढी ने अपनी दौलत चढायी थी। पंजाब और गंगा पार के खुशहाल और समृद्ध मैदानी इलाकों की दौलत पर कब्जा करने के लिए यह जरूरी था कि आनन्दपाल पर हमला किया जाय। उधर हिन्दुस्तान के राय

शासक भी आनन्दपाल के महत्व को समझते थे कि उनके और हमलावर गजनी प्रदेश के बीच आनन्दपाल का इलाका ऐसा है जो किसी भी हमले का गमन के काम आ सकता है। जब तक लडाई सिंध के उस पार चलती रही वे लापरवाह बने रहे और गैर हिन्दुस्तानी जनता की हिफाजत का काम वे लाहौर के राय पर छोड रहे। बीजी राय के अक्खडपन की वजह से उन्होंने उसकी हालत के बारे में कभी सोचा ही नहीं—आनन्दपाल को छोडकर दूसरे किसी ने भी मुल्तान के धर्म द्रोहियों की मदद करना अपना फर्ज नहीं समझा। लेकिन अब वह बाढ़ अपने भीषण उतार चढाव के साथ उनकी पवित्र सरहदों तक पहुच चुकी थी जिससे भाई भाई की हत्या करने वाले युद्धों उनकी स्थानीय आजादी तथा उनकी आरामतलबी के खत्म होने का खतरा पैदा हो गया था।

सन 1008 ई० में बरसात का मौसम खत्म होते-होते जब महमूद अपनी सेनाएँ लेकर आनन्दपाल की तरफ बढा, तब दोनों पक्षों को संघर्ष का महत्व अच्छी तरह समझ में आ गया। आनन्दपाल ने अन्य राय नामकों से मदद की अपील की और इस अपील पर जो प्रतिक्रिया हुई उससे निश्चित रूप से ऐसा लगा कि देश की राष्ट्रीय भावना असंगठित भले ही रही हो मरी नहीं थी। उज्जैन, ग्वालियर, कालिंजर, कन्नौज, दिल्ली और अजमेर के शासकों ने अपनी सेनाएँ लेकर पंजाब की ओर कूच किया। हर तरफ से मदद पहुचने लगी। यहाँ तक कि काफिर गक्खर भी आनन्दपाल के झंडे के नीचे जुट गये। हिन्दुस्तान के शहरों और छोटे छोटे गाँवों में देशभक्ति की लहर चल पड़ी थी जिसमें नागों से हथियार उठाने का आह्वान छिपा था। दूर-दूर से हिन्दू औरतें अपने जेवर बेचकर मुसलमानों के खिलाफ लडने के लिए पैसे भेज रही थीं। गरीब बहनों ने जिनके पास बेचने के लिए जेवर नहीं थे चरखा कात कर या मेहनत मजदूरी करके पैसे इकट्ठे किये ताकि सेना के जवानों के लिए कुछ भेज सकें। प्राचीन और शाश्वत सभ्यता को पवित्र मंदिरों और धरती को बचाये रखने के लिए किसी देश को जिस बहादुरी की जरूरत होती है वह सब मौजूद था। फिर भी वर्षों के गृह युद्ध के कारण पैदा सन्देह जनता की देशभक्ति की भावना को आघात पहुचा रहा था राय शासकों को एक दूसरे के इरादों पर शक था और उनके समर्थक भी इस शक में हिस्सा बँटा रहे थे। आनन्दपाल इतना महत्वपूर्ण तो था कि वह अगुवाई कर सकता था पर इतना महत्वपूर्ण नहीं था कि वह आदेश जारी करता और इस प्रकार लडाई के मैदान में हिन्दुस्तानी सेना को किसी एक सेनापति के निर्देश प्राप्त नहीं हो पाये। दूसरी तरफ गजनी के इस योद्धा राजनेता के खेमे में अव्वल दर्जे का अनुशासन था। सेना के नाम पर दुश्मन के पक्ष की भीड की तुलना में उसकी सेना कहीं अधिक पचमेल थी पर वर्षों के लगातार चलाये गये अभियानों से उन्हें एक जैसा कर दिया था। वे अपने

मालिक को जानते थे और कभी दहशत के शिकार नहीं होते थे, जबकि राजपूतों के साथ यह बात नहीं थी।

आनन्दपाल ने अपनी फौज लेकर बहादुरी के साथ ओहिंद (उन्द) की तरफ कूच किया—इससे पहले महमूद को कभी इतनी बड़ी हिन्दुस्तानी फौज का सामना नहीं करना पड़ा था। हमेशा सही साबित होने वाली सुलतान महमूद की सहज बुद्धि ने अनुमान लगा लिया कि हिन्दुस्तानी सेना बड़ी लगन के साथ लड़ेगी और वह हर बार से ज्यादा सतर्क हो गया। उसने अपने खेमे के दोनों तरफ खाइयाँ खोद दीं और हमला करने में हिचकिचाता रहा—चालीस दिनों तक दोनों फौजें आमने सामने पड़ी रहीं। लेकिन हर घंटे नये नये दस्तों के शामिल होने से हिन्दुस्तानी सैनिकों की संख्या बढ़ती जा रही थी। महमूद ने सोचा कि देर करने का मतलब आनन्दपाल को मजबूत बनाना होगा—महज़ सैनिकों की संख्या के कारण वह इतना मजबूत हो सकता है कि गज़नी के बहादुरों पर हावी हो जाय। इसलिए थोड़ी भी देर किये बगैर उसने लड़ाई शुरू करने के लिए अपने एक हजार तीरंदाजों को भेजा। लेकिन इसके लगभग फौरन बाद ही तीस हजार गक्खरों की सेना ने महमूद के सारे जोड़-तोड़ को छिन्न भिन्न कर दिया। नंगे सर पर बाल गक्खरों ने अपने पहले ही हमले में खाइयाँ पार कीं और दोनों तरफ से वे सेना के पड़ाव में घुस पड़े और बेहद साहस के साथ मुस्लिम सेना के घुड़सवार सैनिकों पर टूट पड़े। उन्होंने आदमियों और घोड़ों को काट डाला और पलक झपकते ही तीन चार हजार मुसलमानों को शहादत का स्वाद मिल चुका था। महमूद बेहद घबराहट के साथ अपने खेमे में गक्खरों का जाहिर खण्डन था। कोशिश कर ही रहा था कि तभी युद्ध देवता ने लड़ाई का पलड़ा उसकी तरफ झुका दिया। नफ्था के विस्फोट से घबराकर आनन्दपाल का हाथी लड़ाई के मैदान से भाग खड़ा हुआ और आनन्दपाल के सैनिकों ने समझा कि हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा बादशाह पलायन कर रहा है। सेना में भगदड़ मच गयी और गज़नी के सैनिकों ने आनन्दपाल की भागती हुई फौज का लगातार दो दिन और दो रातों तक पीछा किया। आनन्दपाल के आठ हजार से ज्यादा सैनिक रण में मारे गए थे पर एक भारी भरकम सेना का ऐसा सेना से हार जाना जो युद्ध मैदान टिक भी नहीं सकती थी और महज़ इसलिए हार जाना कि उनमें अन्दरूनी तालमेल की कमी थी—ऐसा घटना थी जिसने हिन्दुस्तानी सैनिकों का हौसला पस्त कर दिया। इस प्रकार महमूद को जिस एकमात्र राष्ट्रीय विरोध का सामना करना पड़ा था वह भी परस्पर आरोपों प्रत्यारोपों में समाप्त हो गया। इस घटना के बाद महमूद को किसी भी हिन्दुस्तानी राज्य-संघ से डर नहीं लगा और अपने अद्भुत सेनापतित्व में वह एक के बाद एक हिन्दुस्तान की रियासतों पर कब्जा करता गया और उन्हें धन

सम्पत्ति से वंचित करता गया।

महमूद ने अपने दुश्मनों में किसी संगठन के न होने का फायदा उठाया और उत्तरी ब्यास की पहाड़ी पर स्थित नगरकोट (कांगड़ा) के मंदिर पर हमला बोल दिया।[9] यह मंदिर भीम का किला नाम से विख्यात है। वह पहले ही चनाब तक घुस गया था और अपने इस ताजा अभियान में उसे महज 12 पड़ाव करने पड़े। उन दिनों नगरकोट के राजपूत आह्निद में लड़ रहे थे और महमूद की तेजी ने उन्हें पीछे छोड़ दिया। वहाँ केवल ब्राह्मण लोग बच रहे थे। महमूद ने मन्दिर को चारों तरफ से घेर लिया और तीन दिन तक महमूद के घेरे में रहने के बाद ब्राह्मणों ने महमूद को अपने कुछ लोगों के साथ किले में प्रवेश करने की इजाजत दी। मन्दिर में इतना धन भरा था जितना किसी राजा के खजाने में भी शायद ही हो और उन असहाय ब्राह्मणों से जुर्माने के रूप में महमूद ने जितना धन वसूला उसकी भी कोई सीमा नहीं थी। उसे कुल मिलाकर सोने के 7,00 000 दीनार सोने और चाँदी के 700 मन बरतन 2 000 मन अशोधित चाँदी और 20 मन के विभिन्न जेवर जो भीम के जमाने से वहाँ रखे हुए थे, मिले। सुलतान महमूद की यह पहली बड़ी उपलब्धि थी और स्वाभाविक तौर पर इससे और ज्यादा धन दौलत हासिल करने की उसकी भूख और बढ़ी।

(7) राज्य-संघ के खिलाफ शक्ति प्रदर्शन (1009 1010 ई०)

आह्निद की दूसरी लड़ाई में आनन्दपाल अपना नाहरेन खो चुका था लेकिन उसकी ताकत में कोई कमी नहीं आयी थी और सुलतान का अगला कदम (1009 1010 ई०) किसी मुहिम की बजाय अपनी ताकत का प्रदर्शन करना था। बताया जाता है कि वह गुजरात की दिशा में बढ़ा लेकिन उसका असली मकसद आनन्दपाल को उस मुस्लिम गठबंधन से पीछे न हटने के लिए आतंकित करना था जिसमें उसकी स्थिति स्वयं बड़ी असुविधाजनक थी। सुलतान अपने घोड़ों को सख्त और नरम जमीन में गारत हुए नया दम के आवाज तत्वों की तलवारों से लैस करके धीरे धीरे मगर चालाकी के साथ अपनी योजना पूरी करने के लिए बढ़ा। एक एक पहाड़ी और घाटी में कत्लआम करते वह यह सुलतान को अपने मकसद में नाकामयाबी नहीं मिली क्योंकि आनन्दपाल के दूत अपने साथ शान्ति और सुलतान की भारी समृद्धि की शुभकामनाएं लेकर गजनी में उसका इंतजार कर रहे थे। आनन्दपाल ने समझ कर लिया था। उसने देख लिया था कि सुलतान के साथ संघर्ष छेड़ने के फलस्वरूप उसका देश किस बुरी तरह बर्बाद हो गया था और जनता पर कितनी विपत्तियां आ पड़ी थी और उसने राज्य संघ को छोड़ने का फैसला किया। जल्दी ही शान्ति कायम हो गयी। आनन्दपाल ने बतौर खराज सुलतान के दरबार में प्रति वर्ष तीस हाथी और सुलतान की सेवा

के लिए दो हजार आदमियों को देने का वायदा किया। अब हिन्दुस्तान के भीतरी इलाके में पहुंचने का रास्ता खुल गया था। अब महमूद आनन्दपाल के दोस्ताना इलाके से होता हुआ अन्य राजाओं के इलाके पर हमला कर सकता था।[10]

गोर पर विजय (1010 ई०)

सन 1010 ई० की गर्मियों में महमूद ने गोर के कुछ अक्खड़ बाशिन्दों को नीचा दिखाने की कोशिश की। गोरियों की संख्या दस हजार थी। उन्होंने अपने खेमों के चारों तरफ एक खाई खोद दी और सवेरे से लेकर दोपहर तक वे बहादुरी से लड़ते रहे। लेकिन इन पहाड़ी पठानी वीरों का उस जमाने की सबसे बड़ी सैन्य कुशल प्रतिभा से कोई मुकाबला नहीं था। महमूद ने पीछे हटने का नाटक किया और उन सीधे सादे लोगों को बहकाकर उनके सुरक्षित स्थानों से बाहर निकाल लिया और नीचे के मैदानी इलाके में उनका सफाया कर दिया। गोर के सेनापति महमूद बिन सूरी को इतना सदमा लगा कि बन्दी के रूप में महमूद के दरबार में पहुंचते ही उसने अपनी अँगूठी में जड़ा रत्न मुंह में डाल लिया और फौरन ही मर गया। अलाउद्दीन जहाँसोज के जमाने तक गोर के राजकुमार गजना के मातहत बने रहे।

(8) मुल्तान पर दूसरा हमला (1010-1011 ई०)

अगले वर्ष जाड़ों (1010-1011 ई०) में महमूद मुल्तान राज्य की ओर बढ़ा जो शायद दिल से अपने विनाश के दिन का इंतजार कर रहा था। आतंक और ताकत के बल पर शहर पर कब्जा कर लिया गया और महमूद ने कट्टर पथिगामी धर्म को मानने वाले बहुत भारी संख्या में करमाथी धर्म द्रोहियों की हत्या की तथा अन्य अनेक लोगों के हाथ पाँव काट दिये। गोर के किले में एक बन्दी के रूप में दाऊद ने अपनी जीवन की इहलीला समाप्त की।

(9) थानेश्वर (1011-1012 ई०)

सन 1011-1012 ई० में महमूद अपने सैनिकों के साथ थानेश्वर की ओर बढ़ा। उसने सुन रखा था कि चक्रस्वामी की मूर्ति के कारण वह स्थान हिन्दुओं के लिए उतना ही पवित्र है जितना मुसलमानों के लिए मक्का। उसे पक्का विश्वास था कि इस प्राचीन धर्मस्थान में काफी खजाना होगा।[11] आनन्दपाल ने संधि के अनुरूप मुसलमानों की सारी अपेक्षाएं पूरी कीं और अपने सौदागरों तथा दुकानदारों को सेना की रसद विभाग की जरूरतों पर निगाह रखने का आदेश दिया तथा अपना भाई सुल्तान महमूद के साथ अपने

दा हज़ार सनिकों को लकर चल पडा। महमूद न राजा के इलाक पर हमला नही किया लकिन उसके इस सुभाव को नामजूर कर दिया कि थानश्वर के लोगा स उस हरजाना तथा सालाना खराज मजूर करनी चाहिए—इसलिए कि उसकी शाही इच्छा समूचे हिदुस्तान स मूर्तिपूजा को एकदम समाप्त करा दना है। यद्यपि काफी दर हा चुकी थी परन्तु थानश्वर के राय न हिन्दुस्तानी राज्य सघ की आवश्यकता के बारे म अपन विचार व्यक्त किय। उसन अपन अन्य शासक बन्धुआ को लिखा था कि यदि इस बात को रोकने के लिए हम कोई बाँध नही बनाते हैं ता यह समूचे मदान म फल जायगी और इसम सभी छोटे बडे राज्य डूब जायेंगे। यह बात काफी सच थी। लकिन राज्य सघ की बेढगी व्यवस्था कोई रूप ल पाती इसस पहल ही महमूद थानेश्वर पहुच गया और वहा के राय को निराश होकर भागना पडा। महमूद न खजाना इकट्ठा किया और बडी फुरसत क साथ उसन अरक्षित शहर की मूर्तिया का ताड डाला। उसका इरादा अभी पूरब की तरफ और आग तक बढने का था लकिन तब उस पूरी तरह आनन्दपाल की मर्जी पर निभर रहना पडता, इसलिए अपन *अफसरो की सलाह मानकर वह भारी सख्या म गुलामो और नौकरो को लकर* वापस चल पडा। अधिकाश एशियाई विजेताओ की तरह महमूद की सना एक गवदनीय सेना थी जो अपनी दल भावना तथा अपन स्वामी क प्रति वफादारी क कारण अखण्ड बनी रहती थी। महमूद को जहाँ कही भी अच्छे सनिक दिखायी पडते थ उन्ह वह अपनी सना म भर्ती कर लेता था। हिन्दुस्तानिया को, उनके गैर मुस्लिम होन क बावजूद धडल्ल स भर्ती कर लिया जाता था और बाद म ता हिन्दुस्तानिया की एक अलग रजिमेण्ट ही बन गयी जिसका सनापति भी हिन्दू था और जिस अपन साथ क अफसरा म काफी ऊचा दर्जा भी प्राप्त था।

महमूद और खलीफा

1012 1013 ई० म महमूद क अफसरा न गर्जिस्तान पर फतह हासिल की और मुलतान न खलीफा अल कादिर बिल्लाह का खुरासान क उन जिला को भी सौंपने का मजबूर किया जिन पर अभी तक खलीफा का कब्जा बना था। लकिन जब महमूद न माग की कि समरकन्द भी उस सौप दिया जाय तो खलीफा ने जोरदार शब्दा म इनकार कर दिया। खलीफा ने कहा कि मैं ऐसा हरगिज नही करूगा और अगर मरी इजाज़त लिय बगर तुमने समरकन्द पर कब्जा कर लिया ता मैं सारी दुनिया के सामन तुम्हें बदनाम करूगा। यह सुनकर महमूद आप म न रहा। खलीफा के दूत का धमकी दत हुए वह चीख पडा तुम क्या चाहत हो कि मैं एक हजार हाथिया या लकर खलीफा की राजधानी पर हमला करू और उस धूल म मिला दू और वहा की मिट्टी का हाथिया पर लादकर

गजनी पहुचाऊँ ?' लकिन मुस्लिम और हिंदू—दोना सभ्यताओं के केंद्रो को एक साथ लूटने की महमूद की नीति कुछ ज्यादा ही साहस भरी साबित होती, फलस्वरूप उस खलीफा से माफी माँगनी पडी—लाख कमजोर होने के बावजूद खलीफा म अभी गजनी साम्राज्य की नतिक बुनियाद को भकभोर देने की ताकत तो थी ही। फिर भी उसन समरकन्द पर अपना अधिकार जमा लिया।

(10) त्रिलोचनपाल और भीमपाल—नन्दुना (1013-1014 ई०)

इस बीच आनन्दपाल की मौत से हिन्दुस्तान के बारे मे महमूद के जोड-तोड को काफी नुकसान पहुचा। नये राय त्रिलोचनपाल का अपने बाप के विपरीत मुसलमानो की ओर काफी झुकाव था, लकिन वह एक कमजोर आदमी साबित हुआ और सारे मामले उसके लडके ने—जिसे उसके समकालीन निडर भीम कहते थे—अपने हाथ म ले लिये। निडर भीम ने अपने पितामह की नीतियो को एकदम पलट दिया और गजनी साम्राज्य के साथ गठजोड समाप्त कर दिया। महमूद को एक बार फिर लाहौर के राज्य से लडाई करनी पडी ताकि हिन्दुस्तान के लिए रास्ता खुला रहे। 1013 ई० की सरद म वह गजनी से रवाना हुआ लेकिन हिन्दुस्तान की सरहद तक पहुचने से पहले ही बर्फ गिरने लगी और बर्फ से बचाव के लिए उसे रुकना पडा। बसत आते ही महमूद के योद्धा पहाडी बकरो की तरह पहाडियो पर चढते और प्रचंड धारा की तरह उतरते हुए फिर बढने लगे। निडर भीम ने मरगला दर्रे म अपनी मोर्चेबंदी की[13]—यह दर्रा बेहद सँकरा, कगार जैसा खडा तथा दुर्गम था। फिर भी अपने गुमाश्ता के आते ही वह दर्रे से नीचे उतर आया और उसने युद्ध के लिए ललकारा। घमासान लडाई के बाद महमूद की सेना को कामयाबी मिली। भीम बालानाथ की पहाडी पर स्थित नन्दुना के किले म अपनी रक्षक सेना छोडकर खुद कश्मीर के दर्रे की ओर भाग खडा हुआ। महमूद ने शायद अब तक पंजाब को अपने साम्राज्य म मिलाने का फसला कर लिया था—उसने नन्दुना पर कब्जा कर लिया और वहाँ अपनी एक टुकडी तनात करके भीम का पीछा करने के लिए आगे बढा। लेकिन वह मायावी योद्धा नहीं पकडा जा सका और कश्मीर की पहाडियो की तलहटी तक जाकर महमूद वापस लौट पडा।

(11) कश्मीर का दर्रा—लोहकोट (1015-1016 ई०)

अगले वर्ष (1015 1016 ई०) सुलतान ने फिर कश्मीर के दर्रे से होकर जाने की कोशिश की लकिन लोहकोट के किले ने उसकी सारी कोशिशें नाकामयाब कर दी। कश्मीर म कुछ और सनिक पहुच गये बर्फ गिरने लगी और यह पहला मौका था जब महमूद को किसी भारतीय किले की मोर्चेबंदी तोडने म

नाकामयाब होकर लौटना पड़ा। वापस लौटते समय झेलम की बाढ़ में उसे भारी तादाद में अपने सिपाही से हाथ धोना पड़ा। उसने बड़ी मुश्किल से पानी के इस संकट से अपना पीछा छुड़ाया और बिना कुछ हासिल किए वह वापस गजनी पहुंचा।

ख्वारज्म का हड़पा जाना (1016 ई०)

पूरब की इस नाकामयाबी का घाटा उत्तर के इलाके को हड़पकर पूरा किया गया। महमूद की बहन ख्वारज्म के शाह अबुल अब्बास मामून से ब्याही थी। लेकिन अभी दुल्हन को अपने इस नए घर में आए एक साल भी नहीं गुजरा था कि बागियों ने अबुल अब्बास का कत्ल कर दिया। महमूद अपने बहनोई की हत्या का बदला लेने के लिए आगे बढ़ा। उसने ख्वारज्म के मैदान में दिन के सामने बागी सेना को शिकस्त दी और अपने प्रधान हाजिब अल्तुनताश को ख्वारज्म शाह की पदवी देकर इस नए विजित इलाके का गवर्नर नियुक्त किया।

(12) दोआब (1018 1019 ई०)—बारन और महाबन

1018 ई० में बरसात के खत्म होते ही आखिरकार महमूद ने गंगा पार के मैदानी इलाकों की तरफ कूच किया, जिसको वह काफी समय से सपना देख रहा था। उसकी फौज लगातार मंदिरों को नियमित सेना की मदद के लिए खुरासान और तुर्किस्तान से बीस हजार ऐसे सिपाही आए जो स्वेच्छा से भर्ती हुए थे। सारे शगुन भी अनुकूल ही थे। हिंदू राज्य संघ समाप्त हो गया था और अब भी ऐसा कोई बच रहा था जो महमूद का असर मुकाबला कर सकता। उसने एक कुशल सेनापति के रूप में ऐसी शोहरत हासिल कर ली थी जिस पर किसी को शक न था और सभी यह जानते थे कि उसके तीर बड़े दुरुस्त थे। त्रिलोचनपाल और निडर भीम हालांकि अभी भी अपने दुश्मनों की आंख में धूल झोंक रहे थे, लेकिन महमूद की सेना ने उत्तर पंजाब पर कब्जा किया था जबकि कश्मीर के राय संग्राम ने सुलतान के साथ संधि कर ली और हमलावर सेना की अगुवाई की। गजनी के सैनिक ऐसे जंगलों को लांघते चले गए जिनमें हवा भी रास्ता भूल जाती थी। उन्होंने पंजाब की पांचों नदियों को पार किया और 2 दिसम्बर को जमुना पार करके तूफान समुद्र की लहरों की तरह बारान (बुलन्दशहर) पर चढ़ाई की। लेकिन राय हरदत्त ने समस्या का हल ढूंढ लिया—वह 10 हजार लोगों को लेकर शहर से बाहर निकल आया जिन्होंने या तो नीति के तहत या अपने विश्वास के कारण धर्म परिवर्तन के लिए ख्वाहिश जाहिर की और मूर्ति-पूजा की मुखालिफत की।[1] इस धर्म परिवर्तन ने नागरिकों की जान बचा ली और महमूद जमुना के सहारे महाबन की ओर चल

पडा। महावन का शासक राय कुलचन्द जिसे स्थानीय युद्ध मे महारत हासिल थी, घने जगल के बीच से अपनी सेना को लेकर बढा। लेकिन महमूद उस जगल म घन झाला के बीच कथे की तरह घुस पडा और उसने महावन की सेना को तितर बितर कर दिया। जमुना पार करने की कोशिश मे अनेक भगोडे डूब मरे और वीर कुलचन्द ने अपनी पत्नी और लडके को मारकर तथा अपने सीने मे छुरा घोपकर बन्दी बनने के अपमान से खुद को बचा लिया।

मथुरा जमुना की दूसरी तरफ कृष्ण वासुदेव की जन्मभूमि तथा प्राचीन और विख्यात शहर मथुरा बसा था। शहर की दीवाल कडे पत्थरो स बनायी गया था और शहर के किनारे बह रही नदी पर बने दोना फाटक मजबूत तथा ऊची नीव पर बनाये गये थ, ताकि वषा म नदी की बाढ स बचाव कर सकें। नदी के दोना तरफ हजारो मकान थे जिनके साथ मन्दिर जुडे हुए थ। फाटको पर ऊपर स नीचे तक लोहे की कीलें जड कर उन्हे मजबूती दी गया थी। इनकी मजबूत चिनाई की गयी थी और दूसरी तरफ अन्य इमारतें थी जिन्हे मजबूती देने के लिए लकडी के चौडे खम्भो का सहारा प्राप्त था। शहर के बीचोबीच सबसे बडा और मजबूत देवा मन्दिर था जिसके बारे म न तो बयान किया जा सकता है और न जिसकी तसवीर ही बनायी जा सकती है। वहाँ के निवासियो का कहना था कि इस आदमियो ने नही बल्कि देवो ने बनाया था। आबादी और शानदार इमारतो के मामले म मथुरा बेजोड था—वहाँ की आश्चर्यभरी चीजो का वणन मनुष्य की जुबान नहीं कर सकती।

लेकिन जब महमूद ने जमुना नदी को पार किया तो हिन्दू कला के इस अद्वितीय स्मारक को बचाने की कोई कोशिश नही की गयी और वहाँ के निवासियो न अपनी जान बचाने के लिए अपनी पवित्र धरोहर को बर्बाद होने के लिए छोड दिया। 'सुलतान ने आदेश दिया कि सभी मन्दिरो को नष्ट कर और आग म जलाकर खाक कर दिया जाना चाहिए। ऐसा लगता है कि महमूद की इस हरकत के पीछे धर्मोन्माद की बजाय उसके कलात्मक दिमाग म पैदा ईर्ष्या की भावना का प्रबल हाथ था। अपनी बबरता म कला-कृतिया का बर्बाद करने के बाद तारीफ म उसने गजनी के उमरावो को लिखा कि 'इस शहर म हजारो ऊँचे ऊँचे महल है जिनम स अधिकाश का निर्माण बडे बडे पत्थरो स किया गया है। मन्दिरो की तादाद इतना ज्यादा है कि उनकी गिनती नहीं की जा सकती। ऐस मन्दिरो को यदि कोई बनवाना चाहे तो उसे लाखो करोडो दीनार खच करने पडेंगे और दो सौ वर्षों तक अत्यन्त कुशल कारीगरो स काम कराना पडेगा।' जहाँ तक धन दौलत की बात है इस हमले म उम्मीद से काफी अधिक कामयाबी मिली—सोने की बनी मूर्तियो स 98 300 मिस्कल सोना प्राप्त हुआ, चाँदी की मूर्तिया की सख्या 200 थी और इन्हें बिना तोडे काँटे पर नही चढाया

जा सकता था और फलस्वरूप ताला नही जा सकता था, दो माणिका की कीमत 5 000 दीनार आँकी गयी। एक नीलम का वजन 450 मिस्काल पाया गया और उनके अलावा धन दौलत से भरपूर किसी शहर से जो कुछ हासिल किया जा सकता था किया गया। मथुरा से कुछ दूर ऐतिहासिक नगर वृन्दावन स्थित है जहाँ नदी के किनारे सात शानदार किले आकाश तक सिर उठाये खडे थे। महमूद के हमले से घबराकर इन किलो के मालिक भाग खडे हुए और इन किलो की सारी धन सम्पत्ति को उसने हडप लिया।[15]

कन्नौज असनी और शेरवा फिर सुलतान ने अपनी सेना का काफी हिस्सा पीछे छोड दिया क्योंकि उसकी कुछ सेना इतनी बडी थी जिसे साथ लेकर मनचाहे ढंग से अभियान नहीं किया जा सकता था। वह अपने साथ तजुर्बेकार पुराने सैनिकों को लेकर कन्नौज की ओर बढा। इस प्राचीन शहर को हर्षवर्धन की राजधानी होने के नाते काफी ख्याति मिल चुकी थी। इसकी रक्षा के लिए इसके चारो ओर सात किले थे जिनकी दीवारो को गंगा का पानी छूता था और शहर मे छोटे बडे तकरीबन दस हजार मन्दिर थे। महमूद गजनवी के हमले के खिलाफ जयपाल और आनन्दपाल को मदद पहुंचाने मे कन्नौज के राय ने थोडी भी मुस्तैदी नहीं दिखायी थी लेकिन महमूद को आता देख उस समय का शासक राज्यपाल[16] भाग खडा हुआ। राय को भागता देखकर अधिकांश नागरिक भी भाग खडे हुए और कन्नौज मे भी वही कहानी दुहरायी गयी जो मथुरा मे घटित हो चुकी थी। महमूद ने एक ही दिन मे सातो किलो पर कब्जा कर लिया और उस शहर को जी भरकर लूटा। गंगा के किनारे और नीचे आजकल के फतहपुर के पास राय चन्दल भोर का असनी का किला था। चन्दल भोर भी जो कन्नौज के राय से युद्ध मे फंसा था भाग गया और महमूद के सैनिकों ने असनी को लूट लिया। फिर दक्षिण की तरफ बढते हुए महमूद का सामना मुज (मुञ्जवान)[17] के किले मे हुआ जिसकी अग्नियल ऊंट जसी आजाद रक्षक सेना ने जिद्दी शैतानो की तरह लडाई लडी और जब सारी उम्मीदें खत्म हो गयी तो उन्होंने अपनी औरतो और बच्चो को आग मे झोंक दिया और आखिरी दम तक लडते रहे। महमूद का अगला निशाना शेरवा[18] का चन्द राय था जो पूर्व मे लाहौर के अभागे शासक त्रिलोचनपाल को उस समय परेशान करने मे लगा था जब महमूद दूसरी दिशा मे उस पर कहर ढा रहा था। इस जानलेवा लडाई मे बचने के लिए त्रिलोचनपाल ने तो यहाँ तक प्रस्ताव रखा था कि वह अपने लडके से अपने दुश्मन की लडकी की शादी करने को तैयार है लेकिन जब निडर भीम अपनी दुलहन लेने पहुंचा तो अपने ससुर द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया और लडाई जारी रही। ज्यो ही महमूद पूरब की तरफ बढा त्रिलोचनपाल भाग खडा हुआ और उसने अग्नी के चन्दल भोर के पास जाकर पनाह ली। दोनों पर समान

रूप से आयी विपत्तियों ने आखिरकार लाहौर और ग्वालियर के राजवंशों के बीच हमदर्दी की भावना पैदा की और निडर भीम ने—जिसे शायद फिर आजादी मिल गयी थी—चंद राय के पास एक दोस्ताना सलाह भेजी सुलतान महमूद हिंद के शासकों की तरह नहीं है। वह काले लोगों का नेता नहीं है। उसके और उसके बाप का नाम सुनते ही सेनाएँ भाग खड़ी होती हैं। मैं उसकी बागडोर को तुम्हारी तुलना में ज्यादा मजबूत समझता हूँ क्योंकि उस अपनी तलवार के केवल एक वार से कभी संतोष नहीं मिलता और न ही उसकी सेना कभी पर्वतमालाओं में से केवल एक पहाड़ी को हासिल करके संतुष्ट होती है। यदि तुम अपनी हिफाजत चाहते हो तो तुम्हें किसी गुप्त स्थान में रहना होगा। इस सलाह का पालन किया गया। चंद राय अपने हाथियों और खजाने को लेकर पहाड़ियों में जा छिपा। लेकिन महमूद ने शेरवा पर कब्जा कर लिया और भागते हुए राय का पीछा करने में उसने काफी फुर्ती दिखायी आखिरकार उसने राय का पता लगा ही लिया और 6 जनवरी 1019 ईसवी की रात में उसने राय को लड़ाई में हराया। कन्नौज से आगे के अभियान में 17 दिन से अधिक समय नहीं लगा, जब महमूद चंद राय के हाथियों को लेकर लौटा जिन पर उसकी काफी पहले से लालच भरी निगाह लगी हुई थी।

महमूद के कारनामे उसके समकालीन धर्मांधों की कल्पनाशक्ति को भी लुभाने में विफल नहीं रहे। महमूद के कारनामे जितने रोमानी थे उतने न तो सिकंदर महान के थे और न शाहनामा में वर्णित वीरों के ही थे। एक रहस्यमय आश्चर्य लोक की खोज हो चुकी थी। हिंदुस्तान की सरहद पर स्थित घने और अभेद्य जंगलों के पार पंजाब की पाँचों विशाल नदियों से परे अनेक वीरान निर्जन प्रदेशों तथा आग की लपटों में जल रहे गाँवों और नगरों के बीच मुअज्जिन' की अजान गूँजती रही। इस कामयाबी पर काफी जश्न मनाया गया। महमूद की कामयाबी के संदेश को प्राप्त करने के लिए खलीफा ने एक विशाल दरबार लगाया। महमूद के अभियानों का विवरण उस मंच से पढ़कर सुनाया गया जहाँ से धार्मिक प्रवचन दिया जाता था और धार्मिक मुसलमानों ने बड़ी चाहत के साथ कल्पना की कि "पैगम्बर के खुशकिस्मत बंदों ने अरब फारस सीरिया और ईराक में जो कर दिखाया था उसे महमूद ने हिंदुस्तान में ही हासिल कर लिया। इससे ज्यादा झूठ और कोई बात नहीं हो सकती। महमूद ने काफी धन-सम्पदा इकट्ठी की थी लेकिन उसने अपने मजहब के प्रति हिंदुस्तानियों के अंदर नफरत ही पैदा की थी। उन्होंने गजनी के विजेताओं का जो रूप देखा था और इन जीतों के बाद लुटे हुए मंदिरों वीरान शहरों और रौंदी गयी फसलों से जो दास्तान सुनने को मिलती थी उससे वे लोग कभी इस्लाम के बारे में कोई अच्छी बात सोच भी नहीं सकते थे जो इस लूटपाट के शिकार बने थे। गजनी

वग की उपलब्धियो ने एक विश्वास के रूप में इस्लाम को ऊँचा नही उठाया था बल्कि उसे कलंकित ही किया था। लूट के जरिये 30 00 000 दिरहाम इकटठे हुए थे। बन्दियो की संख्या का अनुमान इस बात से ही लगाया जा सकता है कि प्रत्येक बन्दी को दो से तीन दिरहाम मे बेचा गया था। इन्हे पकड़कर पहले गजनी ले जाया गया और इन्हे खरीदने के लिए दूर दराज के शहरो से सौदागर गजनी पहुंचे और इन दामो से मावराउन्नहर ईराक और खुरासान देश भर गये—धनी गरीब सारे लोग सबको एक तरह की गुलामी करनी पड़ती थी। शायद मथुरा की यादगार ने ही महमूद को वापस गजनी पहुचने पर एक जुमा मस्जिद और एक कालेज बनवाने को मजबूर किया। अमीरो ने महमूद की इस मिसाल की नकल की और जल्दी ही गजनी ऊंची ऊंची इमारतो से भर गया।

(13) त्रिलोचनपाल और नन्दा—राहिब (1019-1020 ई०)

महमूद का दिमाग अभी भी दूर स्थित दो संकटो से परेशान था। त्रिलोचन पाल और उसके लड़के निडर भीम को लड़ाई में तो हरा दिया गया था लेकिन उन्हे कुचला नही जा सका था और वे अभी भी दोआब में थे। बुन्देलखण्ड मे कालिंजर के राय नन्दा ने भी दुश्मनी भरा रवैया अख्तियार कर लिया था। महमूद की वापसी के बाद राय नन्दा[19] ने ग्वालियर के राय के साथ राज्यपाल के खिलाफ कूच किया और या तो महमूद के प्रति राज्यपाल की कायरता की सजा के रूप में या किसी पुरानी दुश्मनी का बदला लेने के लिए उसने राज्यपाल की हत्या कर दी। त्रिलोचनपाल और नन्दा के बीच गठबन्धन होना स्वाभाविक था। लेकिन अपने पैरो के नीचे दूब उगने देना महमूद के उसूल के खिलाफ था। उसने एक दूसरे हिन्दू राज्य संघ की सम्भावना को कुचल डालने का संकल्प किया और 1019 20 ई० के जाड़ो में उसने एक बार फिर पांचो और दोनो नदियो को पार किया। त्रिलोचनपाल निचला राहिब (रामगंगा) के पार हट गया पर महमूद के अफसरो ने मशक पर तर तरकर नदी को पार किया, उन्होने त्रिलोचनपाल की सेना को तितर बितर कर दिया और बारी[20] नामक नये बसे शहर को जी भरकर लूटा—इस राज्यपाल ने कन्नौज के विध्वंस के बाद बनवाया था। त्रिलोचनपाल की मदद के लिए अथवा हमलावर के साथ अकेले लड़ने के इरादे से राय नन्दा पहले ही अपने साथ छत्तीस हजार घोड़े चार पांच हजार पैदल सैनिक और छह सौ चालीस हाथियों को लेकर कालिंजर से रवाना हो चुका था। सुलतान भी आगे बढ़ा। यह बताना कठिन है कि दोनो की मुठभेड़ कहाँ हुई लेकिन एक ऊंचे टीले से दुश्मन की सेना का सर्वेक्षण करने के बाद सुलतान ने अफसोस जाहिर किया कि उसने अपने को एक खतरनाक अभियान में फँसा

लिया था। लेकिन राय तो और भी भयभीत हो गया, क्योंकि उसी रात उसके दिमाग में अचानक दहशत पैदा हो गयी और अपना सारा साज-सामान छोड़कर वह भाग खड़ा हुआ। महमूद ने यह निश्चित कर लेने के बाद कि हिंदू मुकाबला करने की कोई कोशिश नहीं करेंगे, उसके उजड़े पड़ाव को लूट लिया। त्रिलोचनपाल से उसे 270 हाथी मिल चुके थे, अब उसे 580 हाथी और मिले। लेकिन पंजाब अभी भी महमूद के कब्जे में नहीं आया था। गजनी से इतनी दूर बसे इलाके में जहाँ राय नन्दा की अपराजित सेनाएँ अभी भी मौजूद थीं, महमूद की हालत बड़ी नाजुक थी, उसे भय था कि वापस लौटने में कहीं उसका रास्ता काट न दिया जाय, इसलिए वह बड़ी तेजी से गजनी की ओर रवाना हुआ।

(14) पंजाब का हड़पा जाना (1021-1022 ई०)

महमूद का लक्ष्य हिंदुस्तान पर विजय प्राप्त करना नहीं था। फिर भी दोआब की चढ़ाई में वह अपने आधार से काफी आगे तक बढ़ गया था और उसने महसूस किया कि जब उसकी सेनाएँ बुंदेलखण्ड जितने दूर दराज के इलाके तक हमला कर सकती हैं तब कम से कम पंजाब पर तो उसका पूरा पूरा अधिकार कायम हो ही जाना चाहिए। 1021 ईसवी में वह भारी संख्या में बढ़इयों लोहारों और संगतराशों को लेकर पंजाब की ओर रवाना हुआ—पंजाब में अपनी सरकार कायम करने का पक्का इरादा लेकर बढ़ा। उसका पहला लक्ष्य स्वात, बाजौर और काफिरिस्तान की जन जातियों से निबटना था जिन्होंने अभी तक इस्लाम के जुए को अपनी गर्दन पर नहीं रखा था और जो सिंह (सावय सिंह) के रूप में बुद्ध की पूजा किया करते थे। इन इलाकों के बाशिन्दों को जोर-जबरदस्ती से धर्म-परिवर्तन के लिए मजबूर किया गया और उनके इलाके में एक किले का निर्माण किया गया।[21] और, आगे बढ़ते हुए महमूद ने अपनी पुरानी कोशिशों को दुहराया और उसे फिर कश्मीर के दर्रे के अपराजेय किले लोहकोट के पास पहले जैसी नाकामयाबी का सामना करना पड़ा। लेकिन पंजाब के लिए रास्ता खुल गया था और महमूद ने लूटपाट की नीति छोड़कर वहाँ अपना नियमित प्रशासन कायम किया। लाहौर में एक विश्वसनीय गवर्नर की नियुक्ति की गयी और सूबे के दूसरे हिस्सों में अनेक अधिकारियों को तथा खास खास स्थानों पर रक्षक सेनाएँ तैनात की गयीं। राहिब की लड़ाई के बाद जल्दी ही त्रिलोचनपाल की मृत्यु हो गयी, भिदर भीम भागकर अजमेर के राय के पास पहुँच गया जहाँ 1026 ईसवी में उसकी मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्यु के साथ ही वल्नूर का राजघराना समाप्त हो गया। उसके समकालीन एक मुस्लिम विद्वान ने अपने आसपास फैले विद्वेषों और पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर उस वीर पुरुष के वंश की समाप्ति पर एक बड़ा उपयुक्त समाधि लेख लिखा—"वे उच्च भावों

और उच्च आचरण के लोग थ। अपनी समूची शान शौकत मे उन्होने उचित और अच्छा कर गुजरने की इच्छा म कभी कमी नही आने दी। '[22]

(15) ग्वालियर और कालिंजर (1022 1023 ई०)

अगले वष (1022 1023 ई०) महमूद फिर लाहौर होत हुए नन्दा के खिलाफ चढाई करने के लिए बढा। अपन अभियान के लिए उसने वही रास्ता चुना जिस वह सबसे अच्छा समझता था और वह नही चाहता था कि बहुत ज्यादतियाँ करनी पडें। ग्वालियर को घेर लिया गया था लेकिन वहाँ के राय ने 35 हाथी भेंट देकर शान्ति कायम कर ली। यहाँ तक कि कालिंजर मे घेर लिये जाने पर नन्दा को भी महमूद की कारवाई तकसगत लगी। उसने तीन सौ हाथियो का उपहार दिया। इन्ह राय बडी बतकल्लुफी स किलो स बाहर लाया था ताकि तुक लोग इन्ह पकडें और उन पर सवारी करें। इस उपहार स सदभाव स्थापित करने मे मदद मिली। सुलतान की तारीफ मे राय ने हिन्दी म कुछ पद्यो की रचना की जिससे सदभाव की भावना मे और वद्धि हुई। महमूद के खमे म मौजूद हिन्द फारसी और अरबी के सारे विद्वानो न नन्दा की कविताओ की तारीफ की और महमूद ने एक फरमान जारी करके उसके कब्जे के 15 किलो पर उसके स्थायी दखल की पुष्टि की। नन्दा न भी जवाब मे काफी धन दौलत और बशकीमती जेवर सुलतान को भेंट किये और सुलतान पूव के उस छोर से वापस मुडा जहाँ तक वह इसस पहले कभी नही पहुचा था।

महमूद का ऑक्सस पार का अभियान (1023 ई०)

गजनी वापस पहुचन पर सुलतान ने अपन सनिको को जुटाया। सूबो म तनात सनिको के अलावा गजनी स्थित शाही सना म 54 000 घोडे और 1,300 हाथी [3] थ और इस सना के साथ उसने ऑक्सस को पार किया तथा ऑक्सस पार क नगरो के सरदारो को आतकित करने क लिए वह चल पडा। समरकन्द के अडियल शासक अलीतगिन का जजीरो मे जकडकर सुलतान क सामने पेश किया गया और बन्दी बनाकर हिन्दुस्तान भज दिया गया। छोटे मोटे सरदारो ने अपनी वफादारी का एलान किया। यहाँ तक कि मरहूम ईलक खाँ[24] का भाई यूसुफ कदर खाँ सुलतान म मिलन आया और उसस गुजारिश की कि सल्जूको को ऑक्सस क पार खुरासान पहुचा दिया जाय।

सल्जूक ग्रामीण और बबर तुकमानो का यह सगठन जिस अप्रत्याशित लकिन उनके गुणो क अनुकूल महानता प्राप्त होनी ही थी, काफी दिनो स अपन पडोसियो के लिए परेशानी का कारण बना था। सामानी बादशाहो के शासन काल म व तुर्किस्तान स निकलकर जक्सार्टीज को पार करक बुखारा म नूर म

बस गये थे, जहाँ से वे हर साल ख्वारज़्म में दरगान चले जाते थे। उनका नेता इसराइल था। वह इस कबीले के सरदार सल्जूक का पुत्र था जिसके नाम पर इस कबीले को जाना जाता था। इसराइल तुर्किस्तान और आक्सस पार के मनिरों के लिए लगातार आतंक बना हुआ था। वह एक बवंडर और बाल्लो की गजा की तरह आखेट या लड़ाई करने का आदी था और उससे जिसने भी लड़ाई मोल ली उस मात खानी पड़ी। उसकी तीर की मार से न तो आकाश की कोई चिड़िया बच सकती थी और न जंगल का कोई हिरन।[25] दूसरों की तरह वह तुर्कमानों के सरदार के रूप में सिर पर तिरछी टोपी लगाये और घोड़े पर टाँगें फैलाकर बैठे हुए किसी पहाड़ की चोटी की तरह महमूद के प्रति अपनी वफादारी का इजहार करने आया। धूर्त सुलतान ने इस महत्वाकांक्षी युवा सरदार की ओर संदेह से देखा और सवाल किया कि वह उसकी सेना के लिए कितने आदमी ला सकता है। इसराइल ने जवाब दिया कि यदि इन तीरों में से एक तीर आप हमारे खेमे में भेज दें तो आपके सामने पचास हज़ार गुलाम घोड़ों पर सवार होकर हाजिर हो जायेंगे। यदि इतने सैनिक काफी न लगें तो आप दूसरा तीर बालिक (बिलखान कोह) के गिरोह तक भेज दें आप 50 हज़ार सैनिक और पा जायेंगे। महमूद ने अपनी चिंता को छिपाते हुए कहा यदि मुझे तुम्हारी जाति के कबीले के सारे लोगों की जरूरत पड़े तो क्या करूँ?" इसराइल ने जवाब दिया 'आप मेरा धनुष भेज दें और जैसे ही इस चारों तरफ घुमाया जायगा दो लाख घोड़े आपका हुक्म तामील करने को तैयार मिलेंगे।[6] महमूद ने तय कर लिया कि ज्यादा वक्त बर्बाद करने से पहले ही सल्जूकों को कुचल देना चाहिए। इसराइल के नाम एक हुक्म तामील किया गया कि वह अपने खेमे में ही बंद रहे और इस बीच गज़नी के सैनिकों की देखरेख में चार हज़ार सल्जूक परिवारों को उनके माल-असबाब के साथ ऑक्सस के उस पार भेज दिया गया। सुलतान के प्रबन्धक आसलन हाजिब ने सुझाव दिया कि नदी पार करते समय इन बर्बरों को पानी में डुबा दिया जाय। महमूद ने कहा कि 'किस्मत को बहादुरी की बजाय विश्वासघात से नहीं बदला जा सकता और उसने अपना वायदा तोड़ने से इनकार कर दिया।[27] इसराइल को उसके दो बेटों के साथ दूर बसे कालिंजर के किले के पास भेज दिया गया जहाँ वह सात साल बाद मर गया।[8] इन निर्वासित परिवारों को उत्तर पश्चिम खुरासान के जिलों में चरागाह सौंपे गये और उन्हें खुरासानी अफसरों के तहत रखा गया जिन्होंने इन परिवारों को हथियार छोड़ने का आदेश दिया। लेकिन सल्जूकों को गुलामी की जंजीर में रखने की बजाय फारस के उपजाऊ भू प्रदेशों में बसाना ज्यादा आसान था। आव्रजन का जो सिलसिला एक बार शुरू हो गया था, उसे रोका नहीं जा सका और गज़नी साम्राज्य अन्ततः सल्जूकों के चरागाह में तब्दील हो गया।[29] लेकिन

ये गडबडियाँ तो भविष्य के गर्भ में छिपी ही थी। फिलहाल महमूद सर्वोच्च स्थिति में था और इसराइल का पतन सभी तुर्कमान सरदारों के लिए एक मिसाल बन गया, भले ही आने वाले दिनों पर उसका असर जो भी पडा हो।

(16) सोमनाथ (1025-1026 ई०)

महमूद का ध्यान अब उत्तर भारत की तरफ आकर्षित नहीं हो रहा था, क्योंकि वहाँ के सम्पन्न मन्दिरों का सारा माल उसके खज़ाने में पहले ही पहुंच चुका था। लेकिन धन दौलत से भरा गुजरात का इलाका अभी भी अछूता था और 18 अक्तूबर 1025 ई० को महमूद अपनी नियमित सेना तथा तीस हजार घुडसवारों को लेकर सोमनाथ के मन्दिर की ओर रवाना हुआ। सोमनाथ सरस्वती के उस मुहाने से थोडी दूर पर स्थित था जिसकी बगल में भगवान कृष्ण ने अन्तिम साँस ली थी।[30]

सोमनाथ का मन्दिर फरिश्ता का कहना है कि इब्न-ए-असीर के अनुसार "हिन्द के लोगों का इस बात में यकीन था कि रूहें इंसान के शरीर से बिछुडने के बाद सोमनाथ पहुंचती थीं जहाँ भगवान सोमनाथ अलग-अलग रूहों को उनके लायक शरीर देकर फिर पुनर्जन्म कराते थे। उनका खयाल था कि सोमनाथ के बुत की इबादत में ही दरिया की लहरें उठती और गिरती थी। ब्राह्मण कहते थे कि महमूद ने जिन बुतों को तोडा उनसे चूंकि भगवान सोमनाथ नाराज़ थे इसलिए उनकी मदद के लिए वे नहीं आये वरना पलक झपकते ही वह किसी को भी नेस्तानाबूद करने की ताकत रखते थे। सोमनाथ को बादशाह का दर्जा हासिल था जबकि और दूसरे बुतों को महज़ दरबान और हुक्काम का दर्जा मिला था। हर बार सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण के मौके पर यहां एक लाख लोग इकट्ठा होते थे। दूर दूर से लोग चढावा लेकर आते थे। हिन्दुस्तान के राजे महाराजे दस हजार गाँवों से धन इकट्ठा करके यहाँ चढ़ाते थे।[31] एक हज़ार ब्राह्मण दिन रात यहां पूजा में लगे रहते थे और हालांकि मन्दिर से 600 कोस की दूरी पर गंगा बहती थी फिर भी हर रोज सोमनाथ के बुत को गंगा के ताजा पानी से धोया जाता था।[32] मन्दिर के एक कोने में सोने की जंजीर लटकी रहती थी जिसका वजन 200 मन था और उसमें घंटियाँ लगी हुई थीं। प्रार्थना के समय इस घंटे को बजाया जाता था ताकि ब्राह्मण लोग पहुंच सकें। मन्दिर की सेवा टहल में 500 नर्तकियाँ और 200 संगीतज्ञ रहा करते थे और इनका खर्च मन्दिर के चढ़ावे से निकलता था। तीर्थयात्रियों की हजामत बनाने के लिए 300 नाई तैनात रहते थे। हिन्दुस्तान के अनेक राजाओं ने सोमनाथ को अपनी बेटियाँ चढ़ा दी थीं और वे मन्दिर में रहती थीं। मन्दिर की बहुत बड़ी इमारत थी और इसकी छत सजे सजाये 56 खम्भों पर टिकी थी। सोमनाथ का बुत

पत्थर काटकर बनाया गया था, इसकी लम्बाई पांच गज़ थी। इसमें से दो गज हिस्सा ज़मीन म ऊपर तथा तीन गज़ ज़मीन स नीचे था। तारीख-ए-जैनुल-म्आसीर के अनुसार, मंदिर का भीतरी हिस्सा जिसम सोमनाथ का बुत था, एकदम अँधेरा था और उसम लटकते झाड-फानूसा म लगे बशकीमती हीरा-जवाहराता स निकलती किरणा स रोशनी रहती थी।'[43]

राजपूताना की ओर से चढ़ाई सोमनाथ का ही अभियान ऐसा था जिसस लाग महमूद का याद करत हैं। उसकी मनिक दक्षता की यह सबस महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। हिंदुस्तान पर अभी तक उसन जब भी चढाई की थी ता वह ऐस रास्ता स गुज़रा था जा काफी उपजाऊ थे और उसक सनिका क सामने कभी भुखमरी का खतरा नही पदा हुआ था। दक्षिण की ओर बढत हुए महमूद न पहली और आखिरी बार अपनी चौकसी का दर किनार कर दिया था, कुदरत क तूफानी मौसम तथा दुश्मना के भाला की परवाह नहा की और एस इलाके म घुसन की हिम्मत की जहाँ थाडी भी चूक होन पर बर्बादी का पूरा अदेशा था। आधा रमजान (नवम्बर) बीतते-बीतत वह मुल्तान पहुचा और राजपूताना के लम्बे चौडे रेगिस्तान का पार करन की उसन ज़ारदार तयारी की। फौज के हर जवान को हुक्म दिया गया कि वह अपन साथ पीन क लिए भरपूर पानी और खान के लिए काफी अनाज लेकर चल। इसक अलावा किसी भी आफत का मुकाबला करन क लिए तीस हज़ार ऊँटा पर काफी रसद लाद दी गयी। हमलावर के पहुचत ही अजमेर का राय भाग खडा हुआ। महमूद ने शहर म काफी लूटपाट की, लकिन किल का घेरन म समय बर्बाद करन के लिए वह तैयार नहीं हुआ। एसा लगता था कि चारा तरफ दहशत फल गयी थी इसलिए जिन रास्तो स वह गुजरा उस किसी रक्षा सना क विरोध का सामना नहीं करना पडा। यहाँ तक कि गुजरात की राजधानी अन्हिलवाडा भी अरक्षित पडा था और शहर स ज़रूरत क सामान लेकर महमूद सरस्वती की ओर बढा तथा जनवरी क दूसरे सप्ताह म सोमनाथ क मशहूर मंदिर तक जा पहुचा। सोमनाथ क किले की मीनारें आसमान छू रही थीं और समुद्र की लहरें उसक पाँव चूम रही थी।' वहाँ के हिंदू लोगा न किले के परकोटे पर चढकर मुसलमान हमलावरा स चीखकर कहा हमारे भगवान सोमनाथ तुम्हे यहा खीचकर लाये हैं ताकि हिन्दुस्तान म तुमने जो मूर्तियाँ तोडी है उसकी सज़ा के लिए एक ही बार म वह तुम्हारा नामोनिशान मिटा दें।

सोमनाथ का युद्ध अगले दिन सवेरे शुक्रवार को लडाई शुरू हुई। महमूद क सनिका को शहर की दीवार लाघने म सफलता मिल गयी और हिंदुओ न सनिका का रोकने का असफल प्रयास किया। लकिन परकोटे पर चल रही लडाई अभी खत्म भी नही हुई थी कि रात घिर आयी और महमूद के सैनिक अपन

खेमों म वापस लौट गये। शनिवार को महमूद न परकोटे पर कब्जा कर लिया और फिर वह शहर म दाखिल हो गया। हिंदू लोग अपन घरा स बाहर निकल आये और आखिरी लडाई के लिए मंदिर के चारो ओर जमा हो गय थे। झुंड के झुंड हिंदू सोमनाथ की मूर्ति के सामन प्राथना करन म लग गये थ और आँखो म आँसू भरकर तथा दुखित मन स वे लडाई के लिए आग बढ रह थ। मंदिर के फाटक पर भयानक कत्लआम हुआ जिसम कुछ ही लोग जिन्दा बच। लेकिन एक बार फिर रात क अँधेरे ने महमूद का हाथ रोक दिया और इस बीच एक ऐसी घटना हो गयी जिसस महमूद को किस्मत के ढुलमुलेपन की याद हो आयी।

सुलतान का धावा इतना तेज था कि मंदिर की हिफाजत क लिए गुजरात के राय लोग अपनी सनाओ को एक जगह जुटा नही पाय। फिर भी महमूद क घेरे म पडे लोगो न हताश होकर जो प्रतिरोध किया था उसस राय लोगो को थोडा समय मिल गया, उनकी जटिल सनिक व्यवस्था बेहद तेजी स अपने को तयार करन म जुट गयी और तीसरे दिन सवेरे महमूद ने देखा कि उसके गम को चारो ओर स एक हिंदुस्तानी सना न घेर रखा है जिसे पडोस क राय लोगो न भेजा था। महमूद ने अपनी सना का एक हिस्सा घेरा डाल रहन क लिए छोड दिया और शेष सनिको को लेकर वह नवागन्तुको स भिडन चल पडा। दोनो ओर की सनाएँ बेहद वीरता और साहस के साथ लडी और उनके गुस्से तथा नफरत म लडाई का मदान दहकने लगा। हिंदुस्तानी सना म एक के बाद एक दस्त आकर मिलने लगे और उसकी ताकत बढती गयी। महमूद के सनिक विनाश की कगार पर पहुच गये। महमूद की हालत बेहद नाजुक हो गयी। हारने का मतलब था सफाया और ज्यादा देर का मतलब था हार। महमूद न शेख अबुल हसन खारकानी का लबादा हाथो म लेकर बडी शिद्दत के साथ अल्लाताला की इबादत की और उसने आखिरी हमले के लिए अपनी सना की अगुवाई की। खुशकिस्मती न उसका साथ हमेशा के लिए नही छोडा था—और महमूद को दुश्मन की कतार तोडन म कामयाबी मिल गयी। हिंदू सना की हार न सोमनाथ की किस्मत का फसला कर दिया और आतंक तथा दहशत म ग्रस्त रक्षा सनाओ न फिर कोई प्रतिरोध नहीं किया।

महमूद ने मंदिर म प्रवेश किया और मन्दिर की विशाल सम्पत्ति पर कब्जा कर लिया। सोमनाथ के मन्दिर स उस जितना सोना और हीरे जवाहरात मिले उसका सौवा हिस्सा भी हिंदुस्तान के किसी भी राजा के खजाने म रखी दौलत स अधिक था। बाद के इतिहासकारो ने बताया है कि किस तरह महमूद न ब्राह्मणो द्वारा पेश किये गये हरजाने को लेने म इनकार कर दिया और उसने खुद को बुत फरोश की बजाय बुत शिकन कहलाना ज्यादा पसन्द किया। उसने

सोमनाथ की मूर्ति पर गदा से प्रहार किया और उसे इस भक्ति का पुरस्कार भी फौरन ही मिल गया—मूर्ति के पेट से बेशुमार हीरे-जवाहरात निकले। लेकिन यह एक असम्भव घटना है।[34] उस समय के इतिहासकारों के बयान से इस तथ्य की पुष्टि नहीं होती है—इसके अलावा सोमनाथ की मूर्ति कोई मूर्ति नहीं थी बल्कि एक लिंग था और उसके पेट से हीरे जवाहरात नहीं निकल सकते थे। बदकिस्मती से मूर्ति का तोड़ा जाना एक सही घटना है लेकिन ब्राह्मणों द्वारा हरजाना देने का प्रस्ताव और महमूद द्वारा हरजाना लेने से इनकार किया जाना —बाद के दिनों की प्रचारित कहानियां हैं।

अन्हिलवाड़ा में महमूद

सोमनाथ की विजय के बाद महमूद अन्हिलवाड़ा के राय परमदेव पर हमला करने के लिए बढ़ा। परमदेव के भेजे हुए सहायक दस्ते ने ही गजनी के सैनिकों को नाकों चने चबवा दिये थे। महमूद की सेना को देखकर राय ने सोमनाथ से 40 फरसख की दूरी पर स्थित और चारों ओर से समुद्र से घिरे खाण्डा के किले में शरण ली। लेकिन समुद्र में पानी का उतार होने पर जब महमूद उस तक पहुंचा तो राय भाग खड़ा हुआ और किले तथा किले के खज़ाने पर सुलतान महमूद का कब्ज़ा हो गया। ऐसा लगता है कि अन्हिलवाड़ा वापस लौटने पर ही महमूद के मन में पहली और अंतिम बार हिन्दुस्तान में अपना राज्य स्थापित करने की इच्छा हुई। वह गजनी को मसूद के जिम्मे सौंपकर अन्हिलवाड़ा को अपनी राजधानी बनाना चाहता था। गुजरात की आबोहवा वहां के बाशिन्दों की खूबसूरती, खुशगवार बाग-बगीचों, बहती नदियों और उपजाऊ धरती ने महमूद को मोहित कर लिया और यह सोचकर धन-दौलत की उसकी भूख और बढ़ गयी कि दक्षिण भारत से समुद्र से परे के द्वीपों से उसे काफी खज़ाना हासिल हो सकेगा। लेकिन उसके अफसरों की कतई यह राय नहीं थी। उन्होंने इस विचार का विरोध करते हुए कहा कि 'जिस खुरासान के लिए हमारे तमाम कीमती दोस्तों ने बलि दी और हमने अपनी ज़िन्दगी कुर्बान कर दी उसे छोड़कर गुजरात को राजधानी बनाना राजनीतिक समझ से एकदम परे की बात है।' महमूद को इस विरोध के आगे झुकना पड़ा। उसने सोमनाथ के एक सन्यासी देवशिलिम (दबाशलिम) को गुजरात का गवर्नर नियुक्त किया और गजनी के लिए रवाना हो गया। देवशिलिम ने कुछ समय तक तो सुलतान के हित्म को मेराज वड़ी वफादारी से साथ दिया लेकिन उसकी सत्ता अपनी जड़ नहीं जमा सकी और उसके दुश्मनों ने उसे उखाड़ फेंका।[35]

राजपूताना के शासकों को महमूद के आने की तो जानकारी नहीं हो सकी थी, किन्तु अब वे इस बात की तैयारी कर रहे थे कि उसकी वापस लौटती सेना से

लडाई की जाये। लेकिन सुलतान की सेना लूटपाट व सामाना से लदी थी। उनके पास फालतू लडाई के लिए समय नही था—वे जानते थे कि राजपूताना होकर जाने मे कोई लाभ नही है इसलिए उन्होने सिंध के रेगिस्तान से होते हुए मुलतान जाना बेहतर समझा, हालांकि यह रास्ता भी बेहद खतरनाक था। पहले तो सोमनाथ के एक हिंदू भक्त ने सेना का रास्ता दिखाने का काम संभाला और पूरे एक दिन और एक रात तक यह काम करने के बाद उसने स्वीकार किया कि वह जान बूझकर सैनिकों को उस रास्ते पर ले गया था जहां पानी नही उपलब्ध था। महमूद ने अपने पथ प्रदर्शक को लौटा दिया और उसकी इबादतो से आसमान मे एक रहस्यमय रोशनी दिखायी दी जिससे मुसलमानो की पानी की तलाश पूरी हो सकी। रेगिस्तानी इलाका पार करने के बाद महमूद की सेना को जाटो ने परेशान किया। लेकिन तमाम दिक्कतो के बावजूद उन्हे गजनी पहुचने मे कामयाबी मिल गयी।

(17) जाट (1027 ई०)

महमूद का आखिरी हमला (1027 ई०) जाटो को सजा देने के इरादे से किया गया था, क्योकि जाटो ने सोमनाथ से वापसी के समय महमूद की सेना को बुरी तरह अपमानित किया था। उसने मुलतान मे चौदह सौ नावो का एक बेडा तैयार किया और हर नाव मे तीर, धनुष तथा नफ्था की बोतलो से लैस बीस बीस आदमियो को सवार करके अडियल जाटो पर हमला करने चल पडा। जाटो ने भी चार हजार नावो का एक बेडा बनाया और महमूद की सेना का जमकर मुकाबला किया लेकिन इस नौसैनिक युद्ध मे महमूद की सेना से वे हार गये। दरअसल महमूद का जंगी बेडा काफी उम्दा किस्म का था—उसकी नावो मे आगे की ओर तथा हर तरफ लोहे की नुकीली छडें लगी थी और नफ्था के विस्फोटो ने तो जाटो की सेना पर कहर ही ढा दिया। काफी संख्या मे जाट पानी मे डूब गये और उनके परिवार के सदस्यो को जिन्हे वे सुरक्षा के लिए सिंध के द्वीपो मे छोड आये थे बन्दी बना लिया गया।

इसफहान और राय का हडपा जाना

सुलतान की जिंदगी का बाकी हिस्सा पश्चिमी इलाको के मामलो से ही निबटने मे बीता। सल्जूकों का संकट दिन-ब दिन बढता ही गया। सुलतान के जनरल उन्हे शान्त नही कर पा रहे थे और उन्होने सुलतान से अपील की कि वह खुद ही आये। सुलतान ने वैसा ही किया। सल्जूको की हार हुई और वे तितर बितर हो गये, लेकिन उन ग्रामीण झुडो के तितर बितर होने का रहस्य यह था कि वे फिर से पूरी तैयारी के साथ एकजुट होना चाहते थे। इस बीच सुलतान

के अफसरों ने राय की बुवही रियासत का तख्ता पलट दिया था और इस नय विजित प्रदेश पर अपनी हुकूमत कायम करने के लिए सुलतान रवाना हुआ। उसने धर्म द्रोहियों और करमाथियों पर जबदस्त प्रहार किया—शिया राजवंश के सरक्षण में उनकी सख्या काफी बढ़ गयी थी और जिसके भी खिलाफ धर्म द्रोह का आरोप साबित हो जाता था उसे मौत के घाट उतार दिया जाता था। लेकिन सुलतान के दिन अब पूरे हो चुके थे और 1029 ईसवी की गर्मी में जब इसफहान और राय की हुकूमत मसूद को सौंपने के बाद वह वतन लौटा तब तक तपेदिक (सिल) के पहले आसार जाहिर हो चुके थे। यहां उसकी हालत बिगड़ती गयी हालांकि अवाम के सामने वह बड़ी बहादुरी से आता था। उस वर्ष बसन्त में वह गजनी लौट आया जहा 30 अप्रल 1030 ईसवी को वह 63 वर्ष की उम्र में चालीस साल की निरन्तर सक्रिय गतिविधियों के बाद चिर निद्रा में सो गया।

आखिरी अभियान

हाफिज का कहना है कि 'कठिन सघर्ष करने वाले को दुनिया भी कसकर पकडे रहती है' और परम्परा के कारण हम यह मानना ही पडेगा कि अपनी मौत से दो दिन पहले सुलतान ने, जो अपनी पकड से निकल रही दुनिया के खोने के गम में अपने को तसल्ली नही दे पा रहा था हुक्म दिया कि उसके खजाने के सारे बेशकीमती पत्थरों को निकालकर आँगन में दफन के लिए रखा जाय। वह बड़ी लालसा से उन्हें एकटक देखता रहा। उसे कोई भी सामान ऐसा नहीं दिखायी दिया जिसे वह दान दे सकता। अगले दिन वह अपनी पालकी में सवार होकर अपने हाथी घोडों और ऊँटों को देखने गया और बेहद अभिभूत होकर जोर-जोर से सुबकियां लेने लगा।[36] लेकिन एक दृढ़ और शक्तिशाली विचारों के व्यक्ति के लिए उन अन्तिम क्षणों में हिचकिचाहट दिखाना शोभा नहीं देता था। शायद उस तस्करी और थका देने वाली बीमारी ने उसे इतना कमजोर बना दिया था कि मौत के दरवाजे तक पहुंचते-पहुंचते वह अपने चेहरे पर चढ़ाया गया वह नकाब सभाले नहीं रख सका जिसके जरिए वह अभी तक मानवोचित कमजोरियों को छिपाये रख पाता था। शायद उसका तर्कवादी मस्तिष्क जो आमतौर पर धर्मांधता का भी आलोचक था पर इतना मजबूत नहीं था कि वह किसी दार्शनिक या गूढ धारणाओं की गहराई तक जा सके अपने सामने मौत के रहस्य मय ससार को हर घडे करीब आता देखकर कांप उठा और अपने आखिरी अभियान को उसी दिलेरी से शुरू करने में असफल रहा जिससे अब तक वह हिंदुस्तान के जगलों में अपने को भाग्य देता था। किसी व्यक्ति का मूल्यांकन उसके जीवन के तौर-तरीकों से किया जाना चाहिए न कि इस बात से कि उसकी

मृत्यु किस ढग से हुई। गजनी के फिरोजा महल मे उसके अफसरो ने महमूद के कमजोर शरीर को जब दफनाया उससे पहले ही तीस-तीस लडाइयो के उस अपराजेय वीर का अस्तित्व समाप्त हो गया था।

सदर्भ और टिप्पणिया

1 बिलक्तगिन और पिराई के अस्तित्व की ओर कुछ इतिहासकारो ने ध्यान नही दिया है जबकि दूसरो ने इसमे इनकार ही किया है। फिर भी उनके सिक्को और अत्यन्त विश्वसनीय इतिवृत्तो को देखने से उनके शासनकाल का प्रमाण मिलता है। तिथियो के बारे म काफी भ्रान्तियाँ हैं। रावल रावर्ती ने मिन्हाजस सिराज की अनावश्यक रूप से तीखी आलोचना करने के बाद हिजरी सन की निम्नाकित तिथियाँ प्रस्तुत की हैं अलप्तगिन (32? 352) अबू इशाक (352 353) बिलक्तगिन (353-362) पिराई (362 367)। सभी आधिकारिक विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि हिजरी सन 367 में सुबक्तगिन राजगद्दी पर बैठा। लेकिन बिल्सन कनल की तिथियो से पता चलता है कि अन्य तिथियाँ काफी असगत थी। हिजरी सन 350 म अब्दुल मलिक की मृत्यु हो गयी और अलप्तगिन जो सम्राट के शासनकाल के दिनो म खुरासान का गवनर था और जिसने अब्दुल मलिक की मृत्यु के बाद गजनी पर फतह हासिल की थी 322 से 353 तक गजनी पर शासन नहीं कर पाता। मिन्हाजुस सिराज हमदुल्ला मुस्तौफी और फरिश्ता के सयुक्त प्रमाणो के अनुसार 351 म गजनी पर फतह हासिल की गयी। अब सवाल यह पैदा होता है कि 351 से 367 तक के वर्षों को चार राजाओ के शासनकाल के रूप में कैसे बाँटा जाये? हमदुल्ला मुस्तौफी और फरिश्ता ने अलप्तगिन का 16 वष और अबू इशाक का *एक वष तक शासन करना बताया है। लेकिन उन्होंने बिलक्तगिन* और पिराई पर ध्यान नही दिया। उसके अनुवादक की आलोचना के बावजूद मिन्हाजस सिराज ने सबसे तर्कसगत विवरण दिया है—अलप्तगिन आठ वष इशाक एक वष बिलक्तगिन दस वष और पिराई एक वष। यहाँ से मुझ उपरोक्त ईसवी सन के वर्षों का पता चलता है। मिन्हाजस सिराज और हमदुल्ला मुस्तौफी के विवरणो को देखने से सामानी बादशाहो के शासनकाल की तिथियो का जो पता चला है वे इस प्रकार हैं अब्दुल मलिक बिन नूह (343-350) मसूर बिन नूह (350 365) नूह बिन मसूर (365 387)।

2 ईसवी सन से कुछ समय पहले सीथियन तुर्कों के तुर्कीशाही (कुषाण) राजवश की स्थापना बरहतगिन ने की थी और इस राजवश ने महान सम्राट कनिष्क के अन्तगत उत्तरी भारत के विशाल भाग अफगानिस्तान और तुर्किस्तान तथा मावराउन्नहर को कुषाण साम्राज्य में जब तक शामिल नहीं कर लिया गया तब तक विजय का सिलसिला जारी रखा। तुर्कों को बडी तेजी से हिन्दुस्तानी सभ्यता म समा लिया गया लेकिन इसके परिणाम एकदम अच्छे नहीं रहे। इसका कारण यह था कि बौद्ध धम ने बबर जातियो को उनके अपने स्तर से ऊपर उठाने की बजाय मूर्तिपूजा सम्बन्धी उनके विश्वासो म सहायक होना ज्यादा आसान पाया और तत्कवाद तथा महायान बौद्ध धर्म के रूप म प्रचलित पुरोहित प्रपच के असगत मेल को जनता का धम बना दिया और यह वह जनता थी जो कुषाण

9 नगरकोट उसी का नाम है जिसे कोट कांगड़ा कहते हैं—इसे बिना शक माना जा सकता है क्योंकि आज भी नगरकोट का नाम प्रचलित है। इसके चारों ओर जो पानी है वह बान-गंगा और वियाह (व्यास) का है। किले से एक मील की दूरी पर भीम नाम का नगर है जिसे आजकल भवन नाम से जाना जाता है और जिसका अर्थ एसा मंदिर है जो एक देवी शक्ति के नाम पर स्थापित किया गया है। सम्भवतः भीम नाम गलती से पड़ गया क्योंकि एसा माना गया है कि इसकी बुनियाद वीर भीम ने रखी थी। (ई० एण्ड डी खंड 2 पृष्ठ 445) *। मध्यकाल में अधिकांश मंदिरों और अधिकांश नगरों तथा गाँवों की किलेबन्दी की जाती थी।*

10 जहाँ तक भौगोलिक सन्दर्भों की बात है इस अभियान के बारे में उतबी ने जो विवरण प्रस्तुत किया है वह काफी अस्पष्ट है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसका असली मकसद आनन्दपाल को डराकर उसके साथ गठबंधन करना था और महमूद के इरादे की यह व्याख्या बाद में उतबी द्वारा बयान की गयी संधि से काफी मेल खाती है। सुलतान की भावी समृद्धि के लिए शुभकामनाएं व्यक्त करने का एक तरह से यह मतलब है कि उसे पंजाब से आगे कूच करने की इजाजत दी जा रही है।

11 उतबी का कहना है कि थानेश्वर का अभियान नारदिन (निन्दुना) पर हमले के बाद हुआ और इस गलती में बाद में इलियट भी शामिल हो गया। उनका यह नतीजा एकदम गलत है। थानेश्वर का अभियान आनन्दपाल के जीवनकाल में ही हुआ था इसलिए निन्दुना का अभियान जो उसके लड़के त्रिलोचनपाल के खिलाफ था थानेश्वर के अभियान से पहले नहीं हो सकता था। फरिश्ता ने अपने विवरण में सही क्रम का प्रयोग किया है।

12 चक्रस्वामी कांसे की बनी विष्णु की एक मूर्ति थी जिसके एक हाथ में चक्र था। इसे उठाकर गजनी ले जाया गया और शहर की रंगशाला में फेंक दिया गया। (अलबरूनी)

13 निन्दुना पर कब्जा होने से पहले जो कारवाई की गयी थी उससे ऐसा लगता है कि मरगला दर्रे में आयोजित युद्ध था। उतबी के वर्णन से भी यही पता चलता है। बालानाथ की पहाड़ी झेलम के ऊपर स्थित एक पहाड़ी है जिसे अब आमतौर से टील्ला कहते हैं। अभी भी इसे कभी-कभी बालानाथ कहा जाता है और इसकी सबसे ऊंची चोटी पर एक योगी का मशहूर मठ है जिसकी शोहरत सुनकर हिंदुस्तान के दूर दूर के हिस्से से लोग उसे देखने आते हैं। (ई० एण्ड डी०)

14 निज़ामुद्दीन और फ़रिश्ता ने गलती से इस क्रम परिवर्तन का श्रेय कन्नौज के राय को दिया है और उन्होंने यह भी उल्लेख किया है कि कन्नौज ही पहला शहर था जिस पर महमूद ने हमला किया था। उन्होंने महमूद की सेना के बढ़ने के रास्ता के बारे में काफी घपला पैदा किया है और बताया है कि उसने यमुना नदी को कई बार इधर-से उधर पार किया। मैंने उतबी के समकालीन विवरण का अनुसरण किया है जो बाद के लेखकों द्वारा की गयी भयंकर भौगोलिक भूलों से मुक्त है।

15 यमुना के किनारे स्थित मथुरा की खूबसूरती का वर्णन करना बहुत कठिन है और गर्मियों की एक शाम को मैं वहाँ के प्रमुख नागरिक पंडित राधाकृष्ण के साथ नदी के किनारे टहलते समय यह कल्पना कर सकता था कि अपने गौरव के दिनों में यह स्थान कितना भव्य रहा होगा। भगवान कृष्ण की कथाओं में आने वाली मशहूर सड़क जो वृन्दावन तक जाती है आज भी अपनी कार्यात्मक अनुभूतियों को लिए हुए है। आज भी

अगर कोई यात्री वहाँ जाता है तो उसे जो कुछ देखने को मिलता है उसमें वह बुरी तरह बंध जाता है और बाद के कलाकारों द्वारा बनाये गये चित्रों और दश्यावलियों की खूबसूरती वैसी ही है जैसी वह महाभारत के दिनों में थी। (एक मिसकल=1 3/7 ड्राम)

16. उतबी उसे राय जयपाल कहता है जो राज्यपाल के बराबर है लेकिन उसे लाहौर का राय जयपाल नहीं समझ लिया जाना चाहिए क्योंकि लाहौर के जयपाल की वर्षों पहले मृत्यु हो गयी थी। लेकिन आगे चलकर उतबी चन्द राय के साथ पुरी-जयपाल के युद्ध का वर्णन करता है। पुरी जयपाल आनन्दपाल नहीं बल्कि त्रिलोचनपाल है जिसे अलबरूनी तरोजनपाल कहता है। इसलिए पुरी-जयपाल (जयपाल का लड़का) का उल्लेख करना एक गलती होगी। फिर भी इतिहासकारों ने काफ़ी भ्रान्तियाँ फैलायी हैं। फरिश्ता ने कोरा को कन्नौज का राय कहा है। वी० ए० स्मिथ का कहना है कि त्रिलोचनपाल राज्यपाल का लड़का था। अन्य विद्वानों ने नामों और स्थानों का कितना घपला किया है इसका उल्लेख करने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन अलबरूनी द्वारा दी गयी हिन्दूशाही राजवंश की सूची और इसके साथ उसकी विस्तृत टिप्पणियों ने इस मसले को निश्चित रूप से हल कर दिया है। यदि उतबी के पुरी जयपाल को जयपाल का लड़का न मान कर त्रिलोचनपाल मान लिया जाये तो अन्य कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी।

17. उतबी ने मुज को 'ब्राह्मणों का किला' कहा है और इसका उल्लेख आसना पर कब्ज़ा होने से पहले किया है। यह बहुत असम्भव लगता है क्योंकि शरवा की तरफ़ से गुज़रते समय ही महमूद की इस क़िले से मुठभेड़ हुई। ऐसा लगता है कि उतबी महमूद को दो बार बन्देलखंड पहुँचा रहा है।

18. या तो कालिंजर और बाँदा के बीच केन पर स्थित सेउनरा या कुछ से थोड़ी दूर स्थित पहोंज पर श्रीवागढ़। (इ० एण्ड डी० खंड 2 पृष्ठ 659)

19. वी० ए० स्मिथ उसे गढ़ा कहते हैं।

20. गंगा के पश्चिमी तट पर बसा कन्नौज एक बहुत बड़ा नगर है लेकिन इसका अब अधिकांश हिस्सा खंडहरों के रूप में है। इसलिए इसकी राजधानी को गंगा के पूरब बारी शहर में ले जाया गया है। दोनों शहरों के बीच इतनी दूरी है जो तीन चार दिनों में चलकर तय की जा सकती है। (अलबरूनी खंड 1 पृष्ठ 199)। रामगंगा जहाँ गंगा में आकर मिलती है उससे कुछ ही दूरी पर युद्ध हुआ होगा। वी० ए० स्मिथ ने पराजित राजकुमार को राज्यपाल का लड़का कहा है जो गलत है। उतबी के वर्णनों से यह सन्देह दूर हो जाता है कि वह आनन्दपाल का बेटा त्रिलोचनपाल है।

21. फ़ारसी इतिहास को देखने से क़िरात और नारदिन (या नूर) का पता चलता है जिन्हें इलियट ने अलबेरूनी के आधार पर नूर और किरा नदियाँ माना है जो काबुल नदी में आकर मिलती हैं। निस्सन्देह उसका मतलब सरहद के क़बीलों से है। बौद्ध धर्म के काफ़ी अवशेष वहाँ मौजूद हैं जिससे सिंह की पूजा के बारे में पता चलता है (ई० एण्ड डी० खंड 2 पृष्ठ 444)। वहाँ स्थित एक विशाल मंदिर को तोड़ने पर सिंह की एक सुसज्जित मूर्ति मिली जो हिन्दुओं के विश्वास के अनुसार चार हज़ार वर्ष पुरानी थी। (फरिश्ता)। सरहद पर और पंजाब में सामरिक महत्व के स्थलों पर क़िला का निर्माण करने के लिए बढ़इयों लुहारों और संग-तराशों को लाया गया था।

22. अलबरूनी खंड 2 पृष्ठ 13।

23. महमूद के पास कुल हाथियों की संख्या 2 500 बतायी जाती है।

24 काशगर के खानो की पदवी थी ईलक खाँ । मीरखोन्द फरिश्ता और हमदुल्ला मुस्तौफी ने इन्द खाँ का जो विवरण दिये हैं उनमें बहुत ज्यादा फर्क है। मोहम्मद इब्नेअली इब्नेसुलेमानर रावदी लिखित रहातुस्सुदूर (डाक्टर एम इकबाल द्वारा सम्पादित) में उसे ईलक खाँ कहा गया है। भारतीय इतिहास के छात्रों के लिए यह कोई ऐसा मसला नहीं है जिस पर बहुत विचार करने की जरूरत हो। यह याद रखना चाहिए कि खलीफा ने महमूद को समरकन्द सौंपने से इनकार किया था।

25 'तबकाते नासिरी ।

26 गिब्बन खड 6। मैंने महान इतिहासकार द्वारा दिये गये उस मशहूर बातचीत का विवरण प्रस्तुत किया है। रहातुस्सुदूर म यह बात और साफ ढग से लिखी गयी है पहला तीर चलाये जाने पर इस्राइल के अपने समर्थकों से एक लाख घोड़े प्राप्त किये जायेंगे दूसरा तीर चलाये जाने पर ऑक्सस पार बसे तुर्कमानों से पचास हजार और तुर्किस्तान म अभी भी रह रहे तुर्कमानो से दो लाख घोड मिल सकेंगे।

27 तबकाते नासिरी'। 'रहातुस्सुदूर म कहा गया है कि इस्राइल के बन्दी बना लिये जाने के बाद सल्जूकों को उनके अनुरोध पर ऑक्सस पार करने की इजाजत दी गयी। हालांकि अर्सलान ने महमूद को ऐसा न करने की सलाह दी थी फिर भी महमूद ने इजाजत दे ही दी।

28 वह जल से एक बार निकल भागा था लेकिन रास्ता भूल गया और फिर पकड लिया गया।

29 सल्जूकों को महत्वपूर्ण स्थिति में लाने वाली प्रारम्भिक घटनाओ के विवरण में फरिश्ता 'रौजतुस्सफा रहातुस्सुदूर' और 'तबकाते नासिरी म काफी मतभद है। इस मामले पर विस्तार से विचार नहीं किया जा सकता और मैं यहाँ केवल उन्हीं तथ्यों को रख रहा हूँ जो मुझ सबसे ज्यादा तकसगत लग रहे हैं। कृपया इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका म प्रोफेसर होत्समा द्वारा 'सल्जूक' शीर्षक से लिखा लेख भी देखें।

30 उतबी ने सोमनाथ के अभियान का वणन नहीं किया है क्योंकि राहिद मे त्रिलोचनपाल की हार के बाद की घटनाओ का उसने इतिहास नहीं दिया है। इस सिलसिले में सबसे पहला प्राधिकारिक विवरण अरब इतिहासकार इब्ने अमीर के 'कमीलत-तवारीख में मिलता है। फरिश्ता ने भी विस्तार से लिखा है लेकिन उसने बाद क घटनाओं को भी शामिल कर लिया है जिसकी पूरी तरह से छानबीन की जानी चाहिए।

31 इब्न असीर से मैंने अकों म सुधार कर लिया है।

32 अलबरूनी का कहना है कि वे कश्मीर स फूलों से भरी एक टोकरी भी लाये थे।

33 सोमनाथ के उद्भव के बारे म प्रचलित किंवदन्ती का अलबरूनी ने इस प्रकार वर्णन किया है प्रजापति ने अपनी पुत्रियों की शादी चन्द्रमा से की थी लेकिन चन्द्रमा उनमें स केवल रोहिणी को पसन्द करता था। प्रजापति ने इस बात की काफी कोशिश की कि उसका दामाद अपनी अन्य पत्नियों के साथ भी न्याय करे लेकिन इसमें उसे सफलता नहीं मिली और उसने चन्द्रमा को कोढ़ी होने के लिए शाप दे दिया। कोढ़ी हो जाने पर चन्द्रमा को बहुत पछतावा हुआ लेकिन प्रजापति अपना शाप वापस नहीं ल सकते थे फिर भी उन्होंने वायदा किया कि आधा महीने तक चन्द्रमा की लाज को वह ढक लेंगे। इस सिलसिले म उन्होंने कहा कि वह अपने पापों से मुक्ति पाने के लिए महादेव के लिंग का निर्माण करें। चन्द्रमा ने ऐसा किया और उसने जिस लिंग का निर्माण किया वही

सोमनाथ की मूर्ति हुई। सोम' का अर्थ चन्द्रमा और 'नाथ' का अर्थ मालिक होता है। इस प्रकार इस शब्द का अर्थ हुआ 'चन्द्रमा का मालिक'। महमूद ने इस मूर्ति को हिजरी सन 416 में तोड़ा था। उसने मूर्ति के ऊपरी हिस्से को तोड़ने का और शेष हिस्से को अपने निवास-स्थान ग़ज़नी पहुंचाने का आदेश दिया था। इसके साथ सोने चांदी और बहुमूल्य जवाहरों से मूर्ति को ढक दिया गया था। इस शेष भाग का कुछ हिस्सा कांसे की मूर्ति चक्रस्वामी (जिसे थानेश्वर से लाया गया था) के साथ शहर की रंगशाला में फेंक दिया गया। सोमनाथ की मूर्ति का दूसरा हिस्सा ग़ज़नी की मस्जिद के बाहर रख दिया गया जिस पर लोग अपने धूल और पानी-लगे पैर रगड़ते थे। सोमनाथ को इतनी ख्याति इसलिए मिली थी क्योंकि समुद्री यात्रा कर रहे लोगों के लिए यहाँ एक बन्दरगाह था। जिस क़िले में यह मूर्ति और ख़ज़ाना थे वह बहुत पुराना नहीं था बल्कि एक सौ वर्ष पहले ही बना था। मूर्ति की पुरानी स्थिति सरस्वती के मुहान से तीन मील दूर थी और लहर जब पीछे लौट जाती थी तो वह स्थान देखा जा सकता था। इसीलिए लिंग की पूजा करने वाले चन्द्रमा की कहानी प्रचलित है। बाद में नदी के मुहान से बहुत थोड़ी दूर पर इस मन्दिर का निर्माण किया गया। (अलबेरूनी खंड 2 पृष्ठ 103)

34 कमालत तवारीख़' में यह नहीं मिलता है। सबसे पहला प्रामाणिक वर्णन तारीख़-ए अल्फ़ी' में मिलता है जो महमूद के छः सौ वर्ष बाद लिखा गया। यह कहानी उन्हीं लोगों द्वारा बनायी और विश्वास की जाती है जिनको सोमनाथ की मूर्ति की वास्तविक बनावट के बारे में कुछ भी नहीं पता है।

35 फ़रिश्ता ने जिन दो दाबशिलिमों का वर्णन किया है उसका आधार अनवर-ए सुहैली से बढ़िया और कहीं नहीं मिलता। यह कहना मुश्किल है कि इसमें कितनी सत्यता है।

36. यह विवरण फ़रिश्ता में मिलता है जिसका कहना है कि महमूद काफ़ी क्षय और दुख के साथ मरा और बाद के सभी इतिहासकार इस घटना को दोहराते हैं। इस घटना की शुरुआत कहाँ से हुई थी यह पता लगाना मुश्किल है। मुमकिन है कि इसे कहानी के ग़ायब हो गये अंशों में से लिया गया हो। इस कहानी में ऐसी कोई भी चीज़ नहीं है जो असम्भावित हो। क्षय रोग का ऐसा असर होता है।

अध्याय 3

महमूद के कार्यों का स्वरूप और महत्व

सभी मनुष्य कमोवेश अपने परिवेश अर्थात अपने अड़ोस-पड़ोस की उपज होते हैं और महमूद के कार्यों की तर्कसंगत आलोचना उसके युग में प्रचलित चेतना की जांच पड़ताल में की जानी चाहिए।

मुस्लिम इतिहास के चार युग

अधिकांश मुसलमान सोचते हैं कि उनका मजहब हमेशा वैसा ही रहा जैसा आज है अथवा दूसरी ओर वे ऐसा प्रकट करते हैं कि पवित्र खलीफाओं के जमाने से ही उनके मजहब में धीमी मगर लगातार गिरावट आती गयी है। इसमें कोई शक नहीं कि इस तरह की बातें एकदम बकवास हैं। अन्य सभी धर्मों की ही तरह इस्लाम के सामने भी आध्यात्मिक उत्थान और पतन के दिन आते जाते रहे हैं। यह अलग-अलग समय में अलग अलग लोगों द्वारा अलग-अलग तरीके से प्रकट किया जाता रहा है। वास्तविक और सही अर्थों में मानवीय चीजों की ही तरह यह हमेशा बदलता रहा और कभी स्थायी नहीं रहा। यहाँ हमारा सरोकार मुस्लिम जगत में हुए महज व्यापकतम परिवर्तनों से है और इन परिवर्तनों को हम इस्लाम के अभ्युदय से लेकर चंगेज खाँ द्वारा मुस्लिम एशिया के विजय तक चार हिस्सों में बाँट सकते हैं (1) विस्तार का पहला युग (622 748 ई०)—इसमें पवित्र खलीफाओं और उनके उमय्या उत्तराधिकारियों के तहत अरब ईराक, सीरिया फारस और उत्तरी अफ्रीका की विजय शामिल है। यह एक ऐसा युग है जिसमें मजहबी जोश की काफी सरगर्मी थी और पीड़ित वर्गों के प्रति इस्लाम की लुभावनी अपीलों के कारण जीत गये इलाकों के लोगों ने धर्म परिवर्तन करके इस्लाम को कुबूल कर लिया था। (2) महान अब्बासी खलीफा का युग (748 900 ई०)—यह समृद्धि और शान्ति का युग है और इसमें किसी इलाके पर विजय

प्राप्त करने का उद्धरण नहीं मिलता। इस एक सार्वभौम सभ्यता वाले काल के रूप में जाना जाता है। इस युग में सभी देशों के पढ़े लिखे लोगों ने अरबी को अपनी भाषा बना लिया और एक केन्द्रीय प्रशासन ने मुस्लिम जगत को एक सूत्र में बाँधकर रखा। (3) 'छोटे-मोटे राजवंशों का युग (900 1000 ई०)—यह मूलतः संक्रमण का युग है जिसमें खलीफा का प्रशासन गायब हो जाता है और इसके अवशेष पर अनेक रियासतें कायम होती हैं। इसका सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है फारसी पुनर्जागरण, जिसने फारसी को साहित्यिक वर्ग की भाषा का दर्जा दिया और अब्बासी खलीफाओं के सार्वभौम विचार के स्थान पर साम्राज्यवादी विचारों को अगली कतार में ला खड़ा किया। (4) तुर्क फारसी साम्राज्यों का युग (1000 1220 ई०)—इस युग को फारसी आदर्शों की राजनीतिक अभिव्यक्ति माना जाना चाहिए और इसमें गज़नी, सल्जूक तथा ख्वारज्मी राजवंशों को शामिल किया जाना चाहिए।

महमूद का स्थान 'छोटे राजाओं' में आखिरी और तुर्क फारसी शहंशाहों में पहला था। उसके तथा उसके समकालीनों को जिस बात से प्रेरणा मिली वह इस्लाम नहीं, बल्कि फारसी पुनर्जागरण की भावना थी।

फारसी पुनर्जागरण का मूल भाव

महमूद गजनवी का युग धर्म की उच्चतर भावनाओं से रहित था और धर्मपरक बहसों ने—जिनमें उसी समय खूब बढ़ोत्तरी होती है जब धर्म मर चुका होता है—उस नाश से ध्यान हटा दिया जो विभिन्न सम्प्रदायों के बीच युद्ध के दिनों में था। जब भगवान में विश्वास करना लोगों के लिए कठिन हो जाता है तो लोग उसके अस्तित्व को साबित करने में लग जाते हैं जब लोग अपने पड़ोसी को प्यार करना बन्द कर देते हैं तो अपने-आपको यह तसल्ली देने में लग जाते हैं कि नफरत करना उनका नैतिक दायित्व है। गैर मुस्लिमों के धर्म परिवर्तन का काम छोड़कर 'धर्म द्रोहियों' के सफाये का काम शुरू हुआ, क्योंकि यह ज्यादा दिलचस्प था। पूरब से पश्चिम तक मुस्लिम जगत साम्प्रदायिक लड़ाई झगड़ों से टुकड़े टुकड़े हो चुका था और जनता की तकलीफों को कम करने में अत्याचारी के लम्बे हाथ बेकार साबित हो रहे थे—वे धर्म से अनजान थे और धर्मांधता में सराबोर थे। धर्म विज्ञानियों के इस वितंडावादी युद्ध से त्रस्त फारस के बुद्धिजीवियों को अपनी राष्ट्रीय संस्कृति के पुनरुज्जीवन से काफी राहत मिली और छोटे मोटे राजवंशों ने, जो खलीफा के न रहने पर पैदा हुए थे, उन्हें आवश्यक सुरक्षा और आश्रय दिया। सभी सूबों के दरबार पुनरुत्थानवादी आन्दोलन के केन्द्र बन गये। पुराने फारसी आख्यानों को फिर से ईजाद किया गया और उन्हें लोकप्रिय बनाया गया। फारसी भाषा को आम जनता की वर्णमाला से निकाल

दिया गया था और उस अब राष्ट्रीय जुबान का गौरव प्राप्त हुआ। कोई भी आदमी जिस काफिया और रदीफ के बडे बडे नियमो वाली इस भाषा म शायरी का ज्ञान था और औसत क्षमता के शायरो को भी अच्छे भविष्य की गारटी थी। इसके अलावा अधउपेक्षित महानता के मोह म ग्रस्त किआनी और सास्मानी साम्राज्यो की शान शौकत न अपेक्षाकृत अधिक कल्पनाशील लोगो को एक एस सम्मोहन म डाल दिया जिसस धीरे धीरे पर निश्चित रूप स वे पगम्बर के रास्ते से दूर होत गये। बेशक यह बदलाव अनजान म हो रहा था। मध्यकालीन यूरोप के अध्यापको की तरह जो अरस्तू के दशन के बारे मे इस तरह चर्चा करते थे जस वह बाईबिल के दस आदर्शों (टेन कमांडमेंटस) पर टिप्पणी हो, महमूद के समकालीनो को शाहनामा की सीखो और कुरान के सिद्धान्तो के बीच फक की जानकारी नही थी। उभरती पीढियो से फरीदुन और जमशद का कवस और कखुसरू को तथा बहादुर रुस्तम तथा मक्दूनिया के सिकन्दर का वही सम्मान मिला जो हर सच्चा मुसलमान पगम्बर और उनके साथियो को देता। अब जबकि पैगम्बर और उनके साथी कुछ उसूलो को हर कीमत पर कायम करन के पक्ष म थे और अपने प्रचार के लिए उन्होंने युद्ध का सहारा ल लिया था फारस के कल्पित वीरो को अपन अनुयायियो के मन म एसी महानतापूण और बबर साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षा पैदा करने म सफलता मिली जिसके साथ कोई नतिक सवाल नही जुडा था और इन वीरो न अपन अनुयायियो के मन मे दुनियादारी का भान बैठा दिया मसलन कालीनियस ने लायतस को वसीयत कर दिया था। सादी क गुलिस्तां ने बाद की पीढी क बच्चो को ऐसा ज्ञान दिया जो बुनियादी तौर पर अपने नजरिये म स्वाथ से भरा था और शानदार ढग स उच्चतर लक्ष्यो स अनजान था।

महमूद का उदय

इस प्रकार नयी लहर न एक तरफ जहाँ नयी सस्कृति क विकास म मदद की और दरबार तथा फौजी खेमो म सुरुचि और परिष्कार का वातावरण पदा किया वही दूसरी तरफ उसने व्यथ और उद्देश्यहीन युद्धो के एक नये युग का सूत्रपात किया जिसके जरिये सूब का बादशाह बागी गवनर कबील के सरदार और यहाँ तक कि खूखार डाकू भी सिकन्दर महान जसी अविश्वसनीय ख्याति पाने की उम्मीद करने लग। तुर्कों की जुझारू चेतना का भी जवाब नही जिन्होंने युद्ध को एक खेल और पुरुषोचित गुण समझा—एक ऐसी चीज समझा जिस अपने आप हासिल किया जा सकता था इस उन्होंने मनवीय समृद्धि प्राप्त करने की तकलीफदेह प्रक्रिया के रूप म नही लिया। महमूद स सौ वष पूव 'छोटे मोटे राजवशो के राजकुमार जमशेद और कखुसरू का दिखावा करत थ और उनके

दरबारी शायर—जिन्हे काफी धन दौलत दिया जाता था—उनकी महानता का इतना बढा चढाकर गुणगान करत थे कि यदि कोई अपनी महत्वाकाक्षाओ से सराबोर न हो तो शम का अनुभव करने लग। इसके बाद महमूद का उदय हुआ—उन चीजो को हासिल करने के लिए जिसके लिए लोगो ने व्यर्थ की लडाई की थी और मौत पायी थी और राज महाराजा न इस नय सिकन्दर की आकृति के सामने विनम्रता स भुककर धूल का स्पश किया। लेकिन शान शौकत से भरपूर यह दिव्यपुरुष भी उसी नश्वर मिट्टी का बना था जिसस उसके पूववर्ती बौने बादशाह बन थे और दुनिया स विदा ल चुके थ। यह महमूद की योग्यता थी न कि चरित्र जिसने उस ख्याति के शिखर तक पहुचाया।

कलाओ का सरक्षक

फारस के साहित्यिक पुनर्जागरण का महमूद के रूप म यदि अत्यन्त भेदभाव बरतने वाला नही तो अत्यन्त शानदार सरक्षक तो मिला ही। राष्ट्रकवि उसुरी क अधीन चार सौ कवि हमेशा सुलतान के दरबार म हाजिर रहत थ। उनका काम सुलतान की तारीफ म गीत गाना था, और महमूद अपनी कजूस प्रकृति क बावजूद उनके प्रति बेहद उदार लगता था। राय के एक कवि गजरी राजी क एक कसीद स खुश होकर सुलतान न उस चौदह हजार दिरहाम द दिय, जबकि पहले से बिना तयार किये गय एक कतआ का पठन पर राष्ट्रकवि क मुह का तीन बार मोतियो से भर दिया गया। दूर दराज के इलाको स आन वाले शायरो म फारुखी नाम क एक शायर थ जिनका एक कसीदा अपनी अदभुत लयात्मकता के लिए मशहूर है। एक और सज्जन मिनचिरी थे जिनको मयखाने की शायरी मे महारत हासिल थी और असजादी को अपनी उस मशहूर रुबाई[1] के लिए काफी शोहरत मिली थी जिसका भावार्थ है—

> मैं शराब स तौबा भी करता हूँ और शराब की बात भी करता हूँ
> चाँदी जसी खूबसूरत ठुड्डिया वाल बुतो की बात करता हूँ।
> झूठा पछतावा और कामुक हृदय—
> ओ खुदा, मेरे इस पश्चाताप को माफ कर दे!

लेकिन यह स्पष्ट है कि सुलतान के सरक्षण न योग्यतम लोगो को इस बात क लिए जरूर प्रेरित किया कि वे भरसक अच्छा-स अच्छा कर दिखायें, लकिन यह सरक्षण प्रतिभा के शिखर पर बठे लोगो को नही प्राप्त हो सका क्योकि हर युग और हर देश मे ऐस लोगो न राजाओ के दरबार के सामन घुटने टेकन स इनकार किया है। इसके लिए महमूद को दोषी नही ठहराया जा सकता। मनुष्य के लिए

अभी भी वह तरीका ढूँढना बाकी है जिसके जरिये वह अपनी उत्कृष्टतम चीजों से तालमेल बठा सके। फारसी राष्ट्रवाद को धम का दर्जा दन वाले मशहूर शायर फिरदौसी से सम्बधित इस किवदन्ती के सम्बन्ध म चाहे जितनी सचाई हो कि वह अफरासियव (तुर्की) नस्ल के शहशाह के यहाँ से भाग खडा हुआ एक बात तो निश्चित है कि तमाम सवेदनशील फारसी बौद्धिकों के दिलोदिमाग पर एक अधकार बुरी तरह छा गया था। एकदम दूसरी तरह के दो व्यक्तियों की दशा भी फिरदौसी की ही तरह हुई। महान चिकित्सक और जीव वज्ञानिक शेख बु अली सिना (एवीसिना) ने उस बादशाह के दरबार म हाजिर होन स इनकार कर दिया जिसे वज्ञानिक विचार और व्यक्तिगत आजादी की बातें समान रूप स अरुचिकर लगती थी और महमूद के रोष के अभिकर्ताओं के सामने एक शहर से दूसरे शहर भागते रहने के बाद वह राय के बुवही शासक के यहाँ राजनीतिक शरण पा सका। उसका दोस्त गणितज्ञ विद्वान अबू रेहाँ अलबरूनी—जिसका *हिन्दू दर्शन का उल्लेखनीय अध्ययन उन तूफानी दिनों के विद्वेषों का सुखद* विरोधाभास प्रस्तुत करता है—भी कम खुशकिस्मत था। उसके देश ख्वारज्म स एक कदी के रूप में उसे लाकर जेल म डाल दिया गया और बाद म उस देश से निकालकर हिन्दुस्तान भेज दिया गया जहाँ उसने घुमक्कड जीवन बिताते हुए अमर कृति किताबुल हिन्द की रचना की।

महमूद के युग की शायरी उसके युग की चेतना की झलक देती है। यह काफी शानदार है, लेकिन इसम गहराई नहीं है। रहस्यवादी विचार अभी तक प्रचलन मे नहीं आये थे और रहस्यवादी भावों का सम्प्रेषित करने वाली विधा—गजल—की खोज अभी नहीं हो पायी थी। उदार सरक्षकों की तारीफ म लिखे जाने वाले कसीदा की रचना म ही शायर लोग लगे रहते थे। फिरदौसी की प्रतिभा ने मसनवी (रोमांस) को लोकप्रिय बनाया जबकि उनके उस्ताद असदी को मुताजिराह यानी वीर रस की शायरी की शुरुआत करने का श्रेय प्राप्त है, हालांकि यह बहुत उल्लेखनीय नहीं है—इस तरह की शायरी म शायराना खयालों की कम ही गुजाइश रहती थी। कताओं और रुबाइयों स शायरों की अगम्भीर भावनाओं की अभिव्यक्ति होती थी। फिर भी गजनी साम्राज्य के शायरों म तमाम खामियों के बावजूद कुछ ऐसी ताजगी था जो बाद के वर्षों मे देखने को नहीं मिली। उनम कोई बनावटीपन नहीं था। उन्हे भौतिक सुख सुविधाओं का स्वाद मिल चुका था और वे औरतो की मासल खूबसूरती तथा शराब की मादकता की तारीफ करना पसन्द करते थे। उनकी मानवीय मनोभावो की वास्तविकता ने उन्हे बाद के युग के निरर्थक शब्दाडम्बरो म पडने स बचाया। बेशक अपने बाद की पीढ़ी के रहस्यवादी शायरो की वह गहरी अनुभूति उनम नहीं थी जिसमे सारे गीतों की शुरुआत और समाप्ति एक अदृश्य सत्ता के

प्रतीकात्मक चित्रण से होती थी पर उनकी शायरी का कम-से कम जिन्दगी से एक लगाव तो था ही। उस समय के शायर वही गाते थे जिसका जनता को अनुभव और ज्ञान प्राप्त था—युद्ध के मैदान में तलवारों की झंकार के गीत योद्धा के शिविर में एक साथ रहने का सुख, पुरुषों और महिलाओं के अंतरंग मनोभावों के गीत जिन्हें एक नकली संस्कृति अभी तक भावनाओं की देशज तीव्रता से वंचित नहीं कर पायी थी और इन सबसे बढ़कर उनके गीतों में उनके प्रिय देश ईरान के गौरव और दुख की गाथा होती थी। कवियों की कविताओं की विषय-वस्तु प्रायः उन दिनों के शिक्षित लोगों के मनोभाव और विचार होते थे। फारसी शायरी का महान युग—जो सादी से शुरू होकर जामी तक खत्म होता था—अभी आना शेष था। फिर भी किसी योद्धा के व्यय के अभियानों की तुलना में शायरी की रचनात्मक प्रतिभा को ज्यादा ठोस विजय मिलती थी। सुलतान की मौत के नौ वर्ष बाद महमूद का साम्राज्य धूल में मिल गया, लेकिन शाहनामा अमर है।

हिंदुस्तान में महमूद के कार्यों पर अलग से विचार किया जाना चाहिए, लेकिन मूलतः सुलतान एक मध्य एशियाई राजा था। अजम की ऐतिहासिक धरती गजनी वंश के राजाओं की उम्मीदों का बाग और कब्रगाह थी। खलीफा का सार्वभौम प्रशासन इस हद तक चूर चूर हो गया था कि उसका पुनर्निर्माण असम्भव था और पिछली कई पीढ़ियों से अपने धर्मनिरपेक्ष और फारसी नजरिये के साथ नया साम्राज्यवाद प्रचलन में आ चुका था। नये साम्राज्यवाद के दो अर्थ थे पहला तो यह कि छोटी छोटी रियासतों पर विजय प्राप्त की जाये जिसमें फारसी सभ्यता से अनुप्राणित सभी मुसलमानों को एक राज्य में इकट्ठा किया जा सके, दूसरे, एक न्यायोचित और परोपकारी प्रशासन की स्थापना की जाय जिसमें समृद्धि और शान्ति के युग का सूत्रपात करके जनता के हर वर्ग को एक सरकार के तहत संतुष्ट रखा जा सके। इस लक्ष्य का पहला हिस्सा जितनी कामयाबी के साथ महमूद ने पूरा किया उतनी ही नाकामयाबी उस दूसरे हिस्से को पूरा करने में मिली। गजनी साम्राज्य के उदय ने समकालीनों को आश्चर्य में डाल दिया लेकिन जितनी तेजी से इस साम्राज्य का पतन हुआ वह भी कम आश्चर्यजनक नहीं था।

महमूद एक सुरुचि सम्पन्न और संस्कृति प्रेमी व्यक्ति था और साहित्य तथा कला में हर अच्छी चीज का वह सहज प्रशंसक था, लेकिन उसकी सबसे बड़ी खूबी थी उसका सेनापतित्व। वैसे तो युद्ध का पागलपन उन दिनों आमतौर से सब पर सवार था लेकिन खलीफा द्वितीय की सेनाओं के सामने सस्सानी साम्राज्य की हार के बाद से अब तक फारस की धरती पर इतना अपराजेय हमलावर नहीं पैदा हुआ था। पूरब में सिकन्दर ने जितनी लूट की थी उससे भी

ज्यादा लूट महमूद ने की। उत्तर की बबर तातार जाति के लोगो को जेक्सार्टीज से पार खदड दिया गया। फारस म छोटे-मोटे राजवशो को चकनाचूर कर दिया गया। इसफहान स बुदेलखड तक और समरकन्द स गुजरात तक गजनी के योद्धाओ ने अपने हर विरोधी को पराजित किया और उन्हें अपने अधीन रख लिया। लकिन जिन पर जीत हासिल की गयी थी, व कायर लोग नही थे। उन्होने बहादुरी के साथ युद्ध किय और वे मरने के लिए उसी तरह तयार रहत थ जिस तरह उनके विरोधी गजनी के योद्धा। महमूद की वज्ञानिक सोच का ही यह कमाल था जिसन उस अपने विरोधियो से मजबूत साबित कर दिया। हिन्दुस्तानियो का सगठन बहुत अनाडी ढग का था और वे बडे बचकाने ढग स सोचत थ कि तादाद म ज्यादा होने स व लडाई जीत जायेंगे—एसी सेना से मुकाबला करने क लिए महमूद युद्ध के मदान म अपनी सना लकर उतरा जिसे एक कमाडर के आदेश मानने का प्रशिक्षण प्राप्त था। मोटी बुद्धि के तातारो को यह समझने म अपनी जान की कीमत चुकानी पडी कि केवल साहस और किस्मत म यकीन रखना ही अनुशासित सैनिको के जबदस्त हमल को रोकने के लिए नाकाफी है। रणनीति की बजाय युद्ध कौशल ही महमूद का सबस मजबूत हथियार था। गजनी म अपन सिंहासन पर बैठकर महमूद की पनी निगाह ने पूरब और पश्चिम का पूरा पूरा सर्वेक्षण कर लिया था। उस पता था कि हमला कहाँ करना है, और उसन जब भी हमला किया पूरी ताकत के साथ किया। वह जितनी तेजी स हमला करता था उससे उसक दुश्मन घबरा जात थ और अचम्भे मे पड जात थ। जिस व्यक्ति ने महज एक साल के अन्दर मुलतान म करमाथियो के छक्के छुडा दिये बलख म तातारो को शिकस्त दी और इसक बाद भी जिस इतना समय मिला कि वह झलम के तट पर एक बागी गवार को पकड सका उस अपन दिलर लकिन धीमी रफ्तार वाल समकालीनो क मन म भी दहशत फलान म सफलता मिली। और फिर भी महमूद अपनी सारी दिलरी के साथ बेहद सतकता बरतता था। उसने कभी ऐस दुश्मन पर हमला नही किया जिस पर काबू पाना उस कठिन लगा। उसने जिस काम का बीडा उठाया उसम उस हमेशा कामयाबी मिली और इसकी वजह यह थी कि उसन एसा कोई काम अपने सिर लिया ही नही जो असम्भव हो। हिन्दुस्तान पर किय गय उसके हमलो म उसकी सनिक प्रतिभा का चरम रूप और साहस तथा सतकता का अदभुत सगम देखन को मिला।

दूसरी तरफ प्रशासनिक मसलो न महमूद को कभी आकृष्ट नही किया। सेना की कमान तो वह खुद सभालता था, लकिन सरकार चलाने का सारा काम उसन अपने मन्त्रियो पर छोड रखा था। उसक असनिक अफसरो म वह सारी योग्यता थी जो आवश्यक मानी जाती है—व बडी सख्ती स काम करते थे और

अपने काम म वसा ही अनुशासन रखत थ जैसा उनक सैनिक साथियो का अनु गासन था। फिर भी उनक अन्दर उस व्यापक दृष्टि का अभाव था जो महमूद की विजय को स्थायी बना सकता—उनक अ दर वह दूर दृष्टि नही थी जो किसी एस राजनेता म हानी चाहिए जो साम्राज्यिक प्रशासन को स्थायी और टिकाऊ बुनियाद दन के लिए अनिवाय हाती है। निश्चित रूप स उसक वजीरो म काफी चालाकी थी और काम करन का उनका ढग काफी दुरस्त था लेकिन हर प्रशासनिक विशेषज्ञ की तरह उनके अ दर भी आदशवाद का अभाव था और बिना आदर्शों वाला साम्राज्य हमेशा रेत पर बने महल जैसा होता है। उसके शासन के शुरू क दो वर्षों के दौरान उसके पिता के वजीर अबुल अब्बास फजल अहमद बिन इस्फराइनी इस पद पर बन रह। अबुल अब्बास का अरबी नही आती थी और उ होने फारसी को सरकारी भाषा का दर्जा दिया जिस बाद म उनके उत्तराधिकारी ने समाप्त कर दिया। वह एक क्लक स तरक्की करत करते ऐस पद पर पहुचा था जिस राज्य म दूसरे नम्बर पर होने का गौरव प्राप्त था और इसीलिए पढा लिखा न हान के बावजूद उस प्रशासन चलान की भरपूर जानकारी थी। राज्य और सना के कामकाज का सचालन वह बहद कुशलता के साथ करता था। फिर भी एक तुर्की गुलाम रखन के प्रश्न पर सुलतान स उसका झगडा हो गया और उस वजीर के पद स हटा दिया गया और उसे अफसरो न सता सताकर मार डाला—वे उसकी सारी जायदाद स उस वचित करना चाहते थ। अबुल अब्बास क उत्तराधिकारी महान ख्वाजा अहमद बिन हसन मैमन्दी न अपने समकालीना पर जो प्रभाव छाडा उससे लगता है कि महमूद क बाद का दजा इसी आदमी का हासिल था। ख्वाजा अहमद महमूद का दूध भाई और सहपाठी था। उसने जीवन भर गजनी वश की निर्दोष निष्ठा के साथ सवा की और अपन मातहता स वह जसी आज्ञाकारिता की माग करता था उसम गजनी के शासको न भी कभी दखलदाजी नही की। उसके पिता हसन ममन्दी का—जिनकी देखरख म राजस्व वसूली का काम हाता था—सुबुक्तगिन न गबन के आरोप म फासी दे दी थी लकिन लडक के जीवन पर इस हादस का कोई असर नही था। अगर महमूद का अपन वजीर की सगठन-क्षमता का सहारा न मिलता तो उसक लिए अपना विजता का जीवन शुरु करना यदि असम्भव नही तो कठिन हो ही जाता। बहद विद्वान कपटनीति म माहिर और कामकाज मे ठोस अहमद ने अठारह वष तक सरकारी मामला का जिस क्षमता स सचालन किया वह बमिसाल है। लकिन एक शक्तिशाली वजीर और एक शक्तिशाली सुलतान का होना सचमुच असगत था और इनके बीच दरार पडनी ही थी। ख्वाजा की मीठी जुबान और प्रचुर निष्ठा के कारण इस काम म दर जरूर हुई पर इसे रोका नही जा सका। उसके असाधारण प्रमुख स बहुता का तकलीफ थी और

उसके खिलाफ सुलतान के दामाद अमीर अली तथा प्रधान जनरल अल्तूनताश के नेतृत्व में एक मजबूत गुट बन गया। सुलतान ने यह साबित करने की ठान ली कि ख्वाजा के बिना भी काम चल सकता है और उसे हिन्दुस्तान के एक किले में कैद कर दिया। यह दिखाने के लिए कि इस पद को जरूरत पड़ने पर समाप्त भी किया जा सकता है महमूद ने कुछ समय तक किसी वज़ीर की नियुक्ति नहीं की। आखिरकार उसने इस पद के लिए अहमद हुसन बिन मिक्ल का तय किया जो हसनाक के नाम से जाना जाता था। यह नया वज़ीर सुलतान का निजी दोस्त था और उसके अन्दर 'बातचीत करने की अद्भुत क्षमता थी। दुर्भाग्यवश वह 'उतावले मिज़ाज' का भी था और अपने इसी स्वभाव के कारण महमूद के शासन के अन्तिम दिनों में उत्तराधिकार के मसले पर उसने गलत पक्ष ले लिया।

अनेक सरकारों के अवशेष पर एक व्यापक साम्राज्य की स्थापना की गयी थी। लेकिन यह किस लिए? हमें यह नहीं बताया गया है कि महमूद का प्रशासन पहले के प्रशासनों की तुलना में बेहतर था जबकि राजस्व की वसूली में और अधिक कड़ाई बरती जाती थी। सबकी यही शिकायत थी कि विजित प्रदेशों में शांति और व्यवस्था कायम किये बिना महमूद एक के बाद एक इलाके जीतने में लगा रहा। पंजाब में अराजकता फैली थी और अन्य सूबों की भी कमोबेश यही हालत थी। काफिले के रास्ते खतरे से भरे थे और सरकार ने समय समय पर यदि सौदागरों की सुरक्षा देने के कदम उठाये भी तो उनसे सरकार की मजबूती की बजाय कमजोरी ही प्रदर्शित हुई। बताया जाता है कि महमूद के बारे में एक बार एक मुस्लिम पीर ने टिप्पणी की कि वह निहायत बेवकूफ इंसान है। जो इलाके उसके पास हैं उन पर तो शासन कर ही नहीं पा रहा है और नये-नये देशों पर फतह हासिल करने बढ़ता जा रहा है। महमूद के अन्दर निश्चित रूप से न्याय की जबर्दस्त प्रवृत्ति थी और इस सिलसिले में कई किस्म कहानियाँ प्रचलित हैं लेकिन उनके सामने जो गिने चुने मामले आये उनमें वह अपनी कुशाग्रता और बुद्धिमत्ता से थोड़ा भी परे नहीं गया। डाकुओं के सरदारों का दमन करने का कोई प्रयास नहीं किया गया जबकि इनके गढ़ साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों के बीच संचार कायम करने में बाधा डालते थे। ऐसी कोई शाही पुलिस-व्यवस्था नहीं थी जो उन कामों को कर सके जिसे पहले छोटे मोटे बादशाह करते थे। मध्यकालीन शहरों और नगरों की हथियारबन्द तथा संगठित जनता को अराजकता फैलाने वाली ताकतों से निपटने के लिए राज्य की थोड़ी ही मदद की जरूरत थी लेकिन वह थोड़ी मदद भी कभी नहीं मिलती थी। यदि हम ग़ज़नवी वंश की सरकार और सल्जूकों के साम्राज्य तथा दिल्ली के सुलतानों के कार्यों की तुलना करें तो हमें पता चल सकेगा कि वे कौन से तत्व थे जिनका महमूद में अभाव था। अच्छे या बुरे किसी भी कानून के लिए उसे श्रेय नहीं

प्राप्त है। उसकी कुशाग्र बुद्धि ने एक भी महत्वपूर्ण प्रशासनिक कदम नही उठाया—उसे सैनिक क्षेत्र म गौरव प्राप्त करने के अलावा और कोई भी चीज श्रष्ठ या उचित नही जँची। लोगो को जबरदस्ती साम्राज्य की छत्रछाया म लाया गया, हिन्दुस्तानी, अफगान तुर्क, तातार और फारसी—सब उसके साम्राज्य मे एक साथ रहे लेकिन उन्हें जोडने वाली कोई चीज नही थी सिवाय इसके कि वे सभी एक ही सम्राट के अधीन थे। अपनी स्थानीय आजादी खोने का अफसोस वे तब भुला सकते थे अगर उन्हे एक बुद्धिमत्तापूर्ण मजबूत और परोपकारी प्रशासन मिलता लेकिन ऐसा प्रशासन देने मे महमूद असफल रहा। सुलतान और उसके अफसरो की दिलचस्पी बस किसी तरह साम्राज्य को चलाते रहने मे थी और नौ साल बाद जब महमूद की मृत्यु के बाद सल्जूकों ने इस निरुद्देश्य ढाचे का ताड गिराया तो किसी ने आँसू नही बहाये।

यह टिप्पणियां हमे पूरबी देशो के इतिहास मे महमूद के सही मूल्यांकन मे सहायक होगी। वह मूलत फारसी पुनर्जागरण द्वारा प्रचलन म लाये गये 'नये साम्राज्यवाद' का अग्रदूत था। सार्वभौम मुस्लिम खिलाफत का युग हमेशा के लिए समाप्त हो चुका था और पैगम्बर के उत्तराधिकारी अब ईश्वर द्वारा नियुक्त प्रशासनिक अध्यक्ष नही रह गये थे। 'छोटे मोटे राजवशो' न अपने कपटपूर्ण आचरणो तथा उद्देश्यहीन लडाइयो से अपने को एक मुसीबत साबित कर दिया था। अब केवल एक ही विकल्प सम्भव था और वह था धर्म निरपेक्ष साम्राज्य या महमूद के शब्दो म कहे तो 'सल्तनत'—जो मुस्लिम जगत म एक जुटता पैदा कर सकती थी और शान्ति तथा समृद्धि की उसकी ललक का पूरा कर सकती थी। इस्लाम ने इस नयी व्यवस्था की नैतिक बुनियादो के बारे म न तो सोचा-समझा था और न मजूरी ही दी थी, इसने प्राचीन फारस स प्रेरणा ग्रहण की थी और काफिराना वातावरण म साँस ली थी। जनतान्त्रिक नजरिये के बावजूद धीरे धीरे शरीयत को समय की जरूरतो को पूरा करने के लिए तोडा मरोडा गया था और यह प्रक्रिया सम्राट की गुलामी करने के उपदेश के साथ पूरी हुई। सम्राट ने अपने को ईश्वर का प्रतिबिम्ब (जिलुल्लाह) कहकर 'दयी' सासानी सम्राटो का रग ढग अपना लिया। इसके नतीजे अच्छे और बुरे—दोनो रहे। तमाम विरोधी ताकतो के बावजूद मुसलमानो के सामाजिक जीवन मे जो जनतान्त्रिक भावना रहा करती थी राजनीतिक जीवन म उसका खात्मा हो गया और जरूरत तथा दुनियादारी की अभिधारणा के कारण मौजूद राजनीतिक जी हुजूरी को एक धार्मिक कर्तव्य का दर्जा दे दिया गया। छ सौ वर्षों की समझदारी और बेवकूफी का लेखा-जोखा करते हुए अब्दुल फजल का कहना है बादशाह का हुक्म मानना अल्लाह की इबादत के समान है।' साथ ही राजतन्त्र के विचार और राजनीति के धर्म निरपेक्ष हो जाने से जो हासिल

हुआ वह निस्सन्देह लाभप्रद था। अपने जातीय मतभेदों और साम्प्रदायिक संघर्षों के बावजूद अजम के लोग अपने बादशाह के प्रति वफादारी के जरिये एकजुट हो गये। इसके अलावा धर्म जब राजा का निजी मामला मान लिया गया और सरकार का दायरा जनता के धर्म निरपेक्ष मामलों तक सीमित हो गया तो मुस्लिम और गैर मुस्लिमों का एक साथ रहना सम्भव हो गया।

महमूद गजनवी को पहला मुसलमान सम्राट होने का श्रेय प्राप्त है और मुसलमानों में राजतन्त्रीय प्रभुसत्ता के उदय के लिए जितना उसे श्रेय दिया जा सकता है उतना दूसरे सम्राट नहीं पा सकते। उसके बाद उससे भी कुशल राजनेता आये और उनसे भी ज्यादा स्थायी राजवंशों की स्थापना हुई लेकिन इससे महमूद की इस खूबी को कम करके नहीं देखा जा सकता। फारस के सल्जूकों और दिल्ली के सुलतान सम्राटों ने प्रशासन के मामले में महमूद से भी बाजी मार ली और इसी प्रकार युद्ध में जीत का सेहरा पहनने के सिलसिले में चंगेज और तैमूर भी महमूद से आगे रहे लेकिन किसी अग्रदूत में खामियों का होना लाजिमी है। मध्य एशिया की उसकी नीति में राजनेता के दर्शन नहीं होते और हिन्दुस्तान में उसने जो कुछ किया वह तो और भी खेदजनक है।

हालांकि महमूद का काफी समय हिन्दुस्तान ने ले लिया, लेकिन उसके सपनों में हिन्दुस्तान के लिए कहीं जगह नहीं थी। उसका असली उद्देश्य तुर्क फारसी साम्राज्य कायम करना था और हिन्दुस्तान पर उसने जो हमले किये वे इसी उद्देश्य की प्राप्ति के साधन मात्र थे। इन हमलों से उसे एक तरफ तो 'धर्म योद्धा' का सम्मान मिला जो उन अजमी राजाओं के खिलाफ सिर उठाने के लिए जरूरी था जिनमें से हर एक महान बनने आया था और दूसरी तरफ मन्दिरों की लूट से उसे इतनी दौलत हासिल हो गयी कि वह अपनी आर्थिक स्थिति को काफी दुरुस्त रख सका और इतनी बड़ी फौज बना सका कि विरोधियों के लिए मुकाबला करना कठिन हो गया। महमूद को पता था कि उसकी ताकत कितनी है इसलिए इससे परे जाने के बारे में उसने सोचा तक नहीं। उसने कभी किसी देश को जीतने की ख्वाहिश नहीं की क्योंकि उसे पता था कि यह सम्भव नहीं है। व्यावहारिक राजनीति के अनुसार किसी ऐसे देश में जहाँ मुस्लिम आबादी न हो मुस्लिम सरकार की स्थापना करना गलत साबित होता। महमूद कोई धर्म प्रचारक नहीं था। उसका उद्देश्य लोगों का धर्म परिवर्तन करना नहीं था और उसके पास इतनी अक्ल थी कि सेना के जरिये एक विरोधी आबादी को दबाये रखने की नाकामयाब कोशिश में अपने सैनिकों का समय बर्बाद किया जाये। उसने एक झटके में यह सब पा लिया जिसे सदियों की मेहनत से हिन्दुस्तानी उद्योग धंधों ने इकट्ठा किया था और सारा माल लूटने के बाद उसने हिन्दुस्तानियों को फिर से अपने शहरों और किलों को तथा देवताओं की टूटी

बनिया को बनाने के लिए छोड दिया। उसको सोने की और सम्मान की जरूरत थी जिसे उसने पा लिया था—इससे ज्यादा उसे कुछ नहीं चाहिए था। महज अन्हिलवाडा में उसके दिमाग में दो चार पल के लिए यह बात आयी थी कि यहा अपना शासन स्थापित किया जाये। इलाका को हडपने का उसका इरादा नही था। अपने राज्य का विस्तार करने की उसकी इच्छा नहीं थी—इसका सबूत यह है कि काफी देर में, 1021 22 ई० में, कही जाकर उसने पजाब को अपने राज्य में मिलाया था। शुरू में उसने उम्मीद की थी कि आनन्दपाल के साथ उसका गठबन्धन हो जायगा और गगा पार के मैदानी इलाको मे बढने मे मदद मिलेगी। लेकिन आनन्दपाल की मौत के कारण यह सम्भव नहीं हो सका और महमूद ने देश में और कहीं अपना पैर जमाने की जरूरत महसूस की। फिर भी ऐसा लगता है कि उसने लाहौर और मुल्तान पर महज एक डाकू के ठिकाने की तरह निगाह डाली जहा से वह अपनी मर्जी के मुताबिक हिन्दुस्तान और गुजरात पर धावा बोल सके। दूसरी तरफ, पश्चिम की ओर उसने जो हमले किये उनसे एक दूसरी ही नीति का पता चलता है। इन अभियानो में हमेशा जीते गये इलाको को राज्य में शामिल कर लिया गया और बहुधा महमूद ने जीते गये इलाके में सरकार स्थापित करने के काम की खुद देख रेख की।

हिन्दुस्तान के खिलाफ़ महमूद के अभियान सैनिक प्रतिभा की उपलब्धियो का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। महमूद बडी-बडी नदियो और घने जगलो से भरे एक ऐसे अपरिचित देश मे जान का जोखिम उठा रहा था जहा के लोगो का रवैया उसके प्रति बेहद दुश्मनी भरा था और जिनकी भाषा तथा रीति रिवाज से वह बिलकुल नावाकिफ था। महमूद की जगह कोई दूसरा आदमी होता तो वह इस अँधेरे मे छलाँग लगाने जैसा काम मानता लेकिन महमूद कोई जोखिम न उठाने की इच्छा के साथ बडी खबरदारी से एक-एक कदम बढाता गया और ऐसा करने में उसने साहस और सतर्कता का जो मेल दिखाया उतनी ही बहादुरी उसके मातहतो ने भी दिखलायी। एक कदम भी गलत उठने का मतलब था बरबादी, एक भी लडाई अगर वह हार जाता तो उसकी असगठित सेना को उसके इलाके की जनता के रहमोकरम पर रहना पडता। शुरू में उसने कभी दस या बारह बार से अधिक कूच करने का जोखिम नही लिया और सेना पर कब्जा कर लेने में उसके लिए दुश्मन पर सुरक्षित रहकर हमला करना आसान हो गया। लेकिन सतर्कता में उसे कामयाबी मिली और कामयाबी से इज्जत और जब उसे पता चल गया कि उसका नाम सुनते ही दुश्मन के मन में दहशत पैदा हो जाती है तो उसने तीन बार गगा-पार के मैदानी इलाके पर और चार बार गुजरात पर हमला किया। उसके अभियान ऐसे लगने थे जैसे विजय के लिए चली सेना का अभियान हो पर वे खतरे से भरे थे। यहाँ तक कि यदि

किसी लडाई म हार-जीत का फैसला नही हो पाता तो भी काफी तग हो चुके हिंदुस्तानियो का मनोबल फिर ऊँचा उठ जाता है और मदान म इतनी सेना आ जाती जिसकी कल्पना नही की जा सकती। सन 1019 20 ई० म महमद उस समय काँप उठा जब राजधानी से बिना युद्ध किय तीन महीने तक चलते रहन के बाद आखिरकार कालिजर के राय स उसका सामना हुआ। हालांकि राय जबरदस्त मुकाबला कर सकता था फिर भी रात म राय भाग खडा हुआ और इसम पता चलता है कि महमूद के नाम की कितनी जबदस्त दहशत थी। फिर भी यदि महमूद को मदिरो के खजान का मालिक बनना था तो उस य जोखिम उठान ही पडत क्योकि थोडा-थोडा करके देश को हडपना उसके बस की बात नही थी। इसस पता चलता है कि उसने स्थिति के बारे म कभी गलत अनुमान नही लगाया था।

हिन्दुस्तानियो की सगठित अव्यवस्था

अपने हिंदुस्तानी दुश्मनो के खिलाफ सुलतान की स्थिति मजबूत होने का कारण था उसके राज्य का एकात्मक सगठन। गजनी के साधनो को कहीं लगाने की जिम्मेदारी केवल एक व्यक्ति के पास थी जबकि हिंदुस्तान की ताकत असख्य छोटे-बडे रायो स्थानीय सरदारो और गाँव के मुखिया के बीच बँटी थी जिनके बीच समझदारी भरा सहयोग कायम करना नामुमकिन था। हिंदुस्तानियो का सामन्ती सगठन था जिसमे तरह-तरह की स्वामिभक्ति थी, गोत्रवादी भावना थी और स्थानीय आज़ादी की चाह थी और वे ऐस दुश्मन के सामने एकदम असहाय नज़र आते थे जिसके लिए सामन्ती और गोत्रवादी भावनाएँ एकदम अनजानी चीज़ थी। गजनी के सनिक जानत थ कि उनका मालिक कौन है उन्हें किसका हुक्म मानना है जबकि हिंदुस्तानियो का कोई मालिक नही था जिसका वे हुक्म मानते। लाहौर के राय न अपने मातहत राय शासको को गवनर बनाना चाहा पर उन्होने इस अपनी पदावनति समझकर इनकार कर दिया और अपने सेनापति के नफादार सनिक की तरह लडने की बजाय उन्होंने एक एक करके गजनवियो स हारना पसद किया। एक ऐसी अन्दरूनी क्रान्ति का होना बहुत जरूरी था जो समूची रक्षात्मक शक्तियो को एक केन्द्रीय सत्ता के हाथो मे सौंप देती। ऐसा हुए बिना इन नय दुश्मनो का सफलतापूवक मुकाबला नही किया जा सकता था। लेकिन सदियो स चले आ रहे पुराने रीति रिवाजो के कारण एसा हो पाना मुश्किल था और हिंदुस्तानियों के जातीय झगडे सनिक काय काल और स्थानीय अधिकारो की जटिल प्रणाली न उन्हे युद्ध के मदान मे पूरी ताकत के साथ इकट्ठा होने स रोका। नतीजे के रूप म उन्हे पराजय अपमान और बर्बादी मिली। एक के बाद एक मदिरो को लूटा गया हिंदुस्तानी सभ्यता

के केंद्र ध्वस्त हो गए और न ब्राह्मणों की विद्वता न क्षत्रियों की वीरता तथा न लाखों-करोड़ों लोगों की मौन अराधना ही सोने और चांदी की देव प्रतिमाओं को गजनी वंश के सिक्के के रूप में ढलने से रोक सकी। हिंदुस्तानियों में जुभारू भावना की कमी नहीं थी और उनके पास एक ऐसा देश और ऐसा इलाका था जो पूरी तरह उनकी निष्ठा के काबिल था। सोमनाथ के मंदिर के आसपास का इलाका, और गजनी के सैनिकों से लड़ते-लड़ते तमाम अज्ञात किलों की रक्षा में हिंदू सैनिकों द्वारा बहादुरी के साथ अन्त तक किया गया संघर्ष यह बताता है कि यदि उन्हें अच्छा नेतृत्व मिल गया होता तो हिंदुस्तानी सेना कितना कमाल दिखा सकती थी। इससे यह भी साबित होता है कि बेहद निराशा के क्षणों में भी हिंदुस्तानी सैनिक यह नहीं भूले कि मौत को किस तरह गले लगाया जाता है। लेकिन उनके सामाजिक और राजनीतिक रीति रिवाजों ने उन्हें अपंग बना दिया था क्योंकि दुर्भाग्यवश हमारे साथ जुड़े रीति रिवाज किसी संयोग की वजह से नहीं हैं बल्कि वे हमारे धर्म का सारतत्व हैं।

एक बार इस संगठित 'अराजकता' का असली स्वरूप समझ लेने के बाद महान सुलतान ने इससे फायदा उठाने में तनिक भी कसर नहीं छोड़ी। उसने पहला कदम खुद को आजमाने के लिए उठाया था लेकिन जब उसने ओहिन्द (1008) में देखा कि असंख्य सैनिकों वाली सेना लड़ाई के पूरे ज़ोर में आने से पहले ही चींटियों और टिड्डियों की तरह भाग खड़ी हुई तो उसे यकीन हो गया कि हिंदुस्तानी राज्य-संघ एक ऐसा निर्जीव द्रव्य है जिसके सामने वह बेकार ही भयभीत हो रहा था। निरंतर सतर्कता और देख भाल के साथ उसने और उसके पिता ने एक ऐसे भयंकर सैनिक तंत्र का निर्माण किया था जिसका अब सही इस्तेमाल किया जा सकता था। गजनवियों की सेना में तरह-तरह के लोग थे पर वे एक कड़े अनुशासन में थे। उनके अंदर वर्षों का दोस्ताना भाव था अतीत की जीतों की स्मृति थी और भविष्य की लूट-पाट की आशाएँ थीं जिसने हिन्दुस्तानियों, अफगानों, तुर्कों और फारसियों को एक सूत्र में पिरो दिया था। उन्हें प्राप्त प्रशिक्षण से उनके अन्दर आत्मविश्वास की भावना पैदा हुई थी और आत्मविश्वास से वे सफलता की ओर बढ़ रहे थे। कुल मिलाकर सुलतान की तीखी बुद्धि और विभिन्न गुटों में बँटे दुश्मन के खिलाफ लड़ाई को सफलतापूर्वक तेज करने में सुलतान को कामयाबी मिलती रही। इनप्रभ राय-शासकों के बीच महमूद एक बिजली की तरह कौंधता था उनके एकजुट होने से पहले ही वह उनके बीच कूद पड़ता था एक-एक करके उन्हें खदेड़ देता था और बड़े आराम से उन्हें हरा देता था। उसकी ताकत का विरोध करने वाला कोई नहीं था। हिन्दुस्तानियों के दिमाग पर एक अंधकारपूर्ण भय छा गया था। यह समझा गया कि मुसलमानों को हमेशा जीत मिलेगी और यह कि हूणों की एक नयी नस्ल

आर्यावत की पवित्र धरती को लगातार आतंक मे सराबोर रखेगी। इससे ज्यादा गलत बात और क्या हो सकती है! गजनी के सनिक हिंदुस्तान मे बसने नही आये थ।

हमलों का आर्थिक उद्देश्य

उस युग की चेतना का यदि कोई आलोचक ठीक ठीक समझ ल तो उससे इन हमलो का गर धार्मिक स्वरूप काफी स्पष्ट हो जायगा। वे हमल कोई धम-युद्ध नही थ—व सोने चाँदी और सम्मान के लालच म की गयी धम-निरपक्ष करतूतें थी। इनके पीछे कोई धार्मिक इरादा ढूंढना असम्भव है। गजनी वश की सेना धम योद्धाओ का कोई सगठन नही था जो धम की रक्षा के लिए जीने मरने के लिए सकल्प किये थी—यह एक प्रशिक्षित और वेतन भोगी सना थी जो हिंदुओ और मुसलमानो, दोनो स समान रूप स लडने की अभ्यस्त थी। बाद के अभियानो म से केवल एक म स्वयसवी सनिक मौजूद थे और नियमित सना की तुलना म उनकी सख्या का कोई महत्व नही था। महमूद ने अपने तेज और अनुशासित हमलो के लिए इस सेना को एकदम अनुपयुक्त समझा था। सुलतान अपने नजरिये म और मिजाज स इतना अजनतांत्रिक था कि वह उल्लसित धर्मांधता को सुव्यवस्थित नही कर सकता था और उसने कभी ऐस काम म हाथ नही डाला।[3] धम प्रचार का भाव जिसने तमाम उन लोगो की किस्मत पर आँसू बहाये होगे जो शून्य म विलीन हो गय थे या जिन्होने पगम्बर के मजहब को फलाने के लिए हिंदुस्तान की जमीन को काफी मुफीद समझा था, महमद मे नही था। उसका उद्देश्य इसस कही नीचे स्तर का था और ऐसा था जिस प्राप्त किया जा सकता था। वह इस्लाम को न मानने वालो को उनकी भौतिक सुख सुविधाओ स वचित करके ही सन्तुष्ट हो जाता था उसने कभी उन्ह धम परिवतन के लिए मजबूर नही किया और हिंदुस्तान को जस गर मुस्लिम देश के रूप म पाया था उसी रूप मे छोडकर चला गया।

मन्दिरो की सम्पदा

काफी समय स हिंदुस्तान का निर्यात उसके आयात की तुलना मे अधिक था और धीरे धीरे देश के अन्दर बहुमूल्य धातुओ का अम्बार लगता गया। विभिन्न सूबो म खानो म भी काम चल रहा था। इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि हिंदुस्तान म लगातार सोना चाँदी जमा होता गया, जिसकी वजह से यह मशहूर हो गया कि हिंदुस्तान काफी धनी देश है और महमूद के आने के समय तक इस शोहरत से हिंदुस्तान के लिए एक गम्भीर खतरा पैदा हो गया था। इसके अलावा धार्मिक हिंदुओ की कई पीढियो ने धीरे धीरे काफी धन

सम्पदा मन्दिरा तक पहुचा दी थी—किसानो के पास जमा पूजी या राय शासको के खजाने में जमा पैसा तो खच भी हो जाता था, पर मन्दिरो म जो कुछ पहुचता था वह दिन-ब दिन बढता ही जाता था। यूरोप के कथॅलिक चच की तरह हिन्दुस्तानी मन्दिरों के लिए यह असम्भव था कि वे देर सवेर अपनी धन सम्पदा की ओर किसी लोभी की निगाह न आकर्षित कर लें। इस बात की भी उम्मीद नही की जा सकती थी कि महमूद जसा व्यक्ति इस्लाम की नसीहतो को ध्यान मे रखकर सोने पर हाथ लगाने से अपने को रोक लगा जबकि 'साने को दखकर उसका मन वैस ही उस ओर खिच उठता था जस लाह की ओर चुम्बक'—और वह भी खासतौर से उस समय जब हिन्दुस्तानियो ने अपन देश की दौलत का गिने चुने स्थाना मे इकट्ठा करके उसका काम आसान बना दिया हो। दुश्मन को हराने क बाद उसके धार्मिक स्थाना को लूटना उस समय के लोगा द्वारा एकदम उचित समभा जाता था। महमूद की हरकता से उसके हिन्दू दुश्मनो को गुस्सा आया लेकिन उन्ह आश्चय नही हुआ, ब जानते थ कि उसके इरादे धार्मिक नही बल्कि आर्थिक थे और यदि उस काफी हरजाना मिल जाये तो मूर्तियो को सही सलामत छोडन म भी उसे कोई एतराज नही होगा। उसने वह सारा साना ले लिया जिस वे जरूर अपने पास रखना पसन्द करते रह हाग लेकिन उसने कभी उन्हें वह धम स्वीकार करन के लिए बाध्य नही किया जिसमे उनका विश्वास नही था। उसके हिन्दुस्तानी सनिको का अपने नाच बजान और शाही गजनी म मूर्ति-पूजा करन की इजाजत थी। उसन अपने युग मे प्रचलित सीमित अर्थों मे सहनशीलता के सिद्धान्त को मान लिया था। उस इस बात के लिए दोषी नही ठहराया जा सकता कि उसने अपने म पहल और बाद की पीढ़िया का नतिक उत्थान नही किया।

इस्लाम—एक अनुभव-सापेक्ष औचित्य

किसी भी ईमानदार इतिहासकार का और अपन धम की जानकारी रखने वाल किसी भी मुसलमान को ग़ज़नविया द्वारा मन्दिरो के भीषण विनाश के काम को उचित ठहरान की कोशिश नही करनी चाहिए। महमूद के समकालीन तथा बाद के इतिहासकारो न इन घृणित कार्यों पर कभी परदा डालन की कोशिश नही की—उन्होंने इसका गव के साथ बयान किया। किसी के विवेक का गलत रूप म प्रस्तुत करना आसान है और हम खूब पता है कि दुनियावी मुराा के इरादे स किय गय कामो को धम का जामा पहनाकर उचित ठहराना बहुत आसान है। इस्लाम ने कभी हमलावर की गुण्डागर्दी या लूट-पाट म भर इरादों का अपनी मजूरी नही दी शरीयत म ज्ञात किसी भी सिद्धान्त न उन हिन्दू राजाओ पर अकारण हमले को कभी उचित नहीं ठहराया जिन्होंने महमूद और उसकी प्रजा

को कभी कोई क्षति नहीं पहुचायी, धर्म-स्थानों की अंधाधुंध बर्बादी की हर मजहब निंदा करता है। और फिर भी इस्लाम को, जो हालांकि कोई प्रेरणा दायक शक्ति नहीं था, जो कुछ हुआ उसके अनुभव-सापेक्ष औचित्य के रूप मे इस्तमाल किया जा सकता था। गैर मुस्लिम जनता की लूट का इस्लाम की सेवा के साथ मेल बैठाना मुश्किल काम नहीं था और जिन लोगों से इस पर विचार की अपेक्षा की जाती थी उनके अपने स्वार्थ किसी-न किसी रूप में उन पर इस तरह हावी रहते थे कि वे आलोचनात्मक दृष्टि से कभी इसकी जांच ही नहीं कर सके। इस प्रकार कुरान की नसीहतों की गलत व्याख्या की गयी या उनकी अवहेलना की गयी और खलीफा द्वितीय की सहनशील नीति को दरकिनार कर दिया गया ताकि महमूद और उसके लश्कर अपने मन में किसी तरह की हिचकिचाहट लाये बिना हिंदू मंदिरों को लूट सकें।

यह एक ऐसी स्थिति है जिस पर थोड़ा गहराई से सोचने की जरूरत है। नये धर्म के साथ सारी बातें इस पर निर्भर करती हैं कि उसे किस तरह पेश किया जा रहा है। यदि यह धर्म आशा के किसी सन्देश जैसा लगता है तो इसका स्वागत किया जायगा और यदि इसके चेहरे पर बर्बर आतंकवाद का मुखौटा हो तो इससे नफरत पैदा होगी। पैगम्बर के जीवन और खलीफा द्वितीय की नीतियों के जरिये ही विश्व शक्ति के रूप में इस्लाम के बारे में फैसला लिया जाना चाहिए। शुरू के दिनों में इस्लाम को सफलता मिलने का असल कारण यह था कि वह उन धर्मों के खिलाफ जिनकी जनता के दिमाग पर से छाप उतर गयी थी और उन सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाओं के खिलाफ जो निम्न वर्ग के लोगों को पीस रही थीं एक क्रान्तिकारी शक्ति के रूप में उभरकर आया था। इन परिस्थितियों में विजित जनता ने इस्लाम की जीत को एक ऐसी चीज समझा जो आंतरिक रूप से वांछनीय थी। इसने अभिजातीय पुरोहिताई और जर्जर राजतन्त्र को समाप्त कर दिया जबकि पूरब के देशों में प्रचारित प्रसारित समानता के सिद्धान्त ने पीड़ित जनता की प्रतिभा का रास्ता खोला जिसके फल स्वरूप अरब, सीरिया फारस और ईराक की जनता ने बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन किया। अब हिन्दूवाद अपनी तीव्र और जीवन्त चेतना के साथ कुछ ऐसा रूप ले चुका था जो फारस के जरस्थूवादियों और एशिया माइनर के ईसाइयों से जिन्होंने हमलावरों के सामने बड़ी आसानी से आत्मसमर्पण कर दिया विपरीत था। यह किसी गहरे आंतरिक रोग से ग्रस्त नहीं था और हिंदुओं के राष्ट्रीय चरित्र की एक अपनी विशेषता थी जो हर व्यक्ति में देखी जा सकती थी। और यह अपने रीति रिवाजों के प्रति बेहद संतुष्टि और गर्व की भावना से ओत प्रोत थी। अलबरूनी का कहना है कि उनकी धारणा है कि उनके देश जैसा कोई देश नहीं है उनके राष्ट्र जैसा कोई राष्ट्र नहीं है, उनके राजा की तरह

दूसरा कोई राजा नही है, उनके धम की तरह कोई धम नहा है और उनका विनान दुनिया म सबस बढ चढकर है। वे दम्भी, मूख, अभिमानी और शात क़िस्म के लोग थ। उनके मत के अनुसार धरती पर काई देश उन देश जितना महान नहा है। मनुष्यो मे काई भी जाति उनस बढकर नहीं है और विज्ञान की जानकारी उनको जितनी है उतनी और किसी का नही है। उनम इस सीमा तक दम्भ की भावना है कि यदि आप उनस खुरासान और फारस म किसी विद्वान के बार म या वहाँ के किसी विनान के बारे बात करें तो वे आपको अनानी और भूठा समझेंगे।' इतन सकीण खयालो के लोगा स किसी नय सन्देश के प्रति ध्यान देन की आशा नही की जा सकती थी। लेकिन महमूद की नीति न यहाँ बिना किसी सुनवाई के ही इस्लाम को अस्वीकृत करा दिया।

स्वाभाविक है कि किसी धम के बारे म इस आधार पर फसला किया जाना चाहिए कि उस धम म यकीन रखने वाल लोगा का चरित्र कसा है। उनके अन्दर जो गुण या दोष मौजूद हैं उन्हें उनके धम का ही प्रभाव माना जाना चाहिए। इस्लाम धम का मानने वाले जब न्याय और सत्य क रास्त स हट रह थ तब यह निश्चित था कि हिन्दुआ न इस भटकाव को इस्लाम का ही सत्य स भटकाव माना हागा। जनता का उसकी प्रिय चीजा को लूट लन स सन्तुष्ट नहा रखा जा सकता है और न ही वह कभी एस धम को प्यार कर सकती है जा लुटेरी सनाओ के भेष म आकर खेता और शहरा को बर्बाद कर जाय तथा अपनी जीत के ध्वस-स्मारक छाड जाय। मगाला के हमल क बारे म फारस के एक विद्वान ने कहा था कि वे आय और आगजनी, हत्या लूटपाट और धरपकड करक चल गय। हिन्दुस्तान म महमूद न जो कुछ किया उस भी अगर इसी रूप म चित्रित किया जाये ता ग़लत नही हागा। पैगम्बर न अरब म इस्लाम के बार म जो नसीहत दी थी उसका अथ यह नहा था जो महमूद न किया। इसम आश्चय नहा होना चाहिए कि विजेता गजनवियो की हरकतो न हिन्दुआ क दिमाग म इस नये धम क प्रति जितनी नफरत पैदा की और इस धम की प्रगति मे जितनी रुकावटें डाली उतनी रुकावटें सनाओ और क़िला म भी नहा पड सकती थी। अलबरूनी का कहना है कि महमूद न देश की समृद्धि का पूरी तरह बर्बाद कर दिया और इतनी ज्यादा लूटपाट की कि यहाँ के हिन्दू लाग धूल के कणा की तरह चारा तरफ बिखर गय। चारो ओर फले ध्वसावशष मुसलमाना क प्रति बेहद नफरत भडकात हैं। यही कारण है जिसने हिन्दुओ के विनान का उन इलाकों से काफी दूर भेज दिया जिन पर मुसलमाना न जीत हासिल की थी। विनान की शाखाएँ कश्मीर बनारस तथा अन्य स्थाना तक पहुच गयी जहाँ हमार हाथ नहीं पहुँच सकत थ। और इन स्थाना में हिन्दुस्तानियो तथा सभी विदेशिया क प्रति वैर भाव राजनीतिक तथा धार्मिक कारणा स दिन ब दिन

बढ़ता गया।'

'लोग चले जाते हैं लेकिन उनकी बुराइयाँ बच रहती हैं, जबकि बहुधा अच्छाइयाँ अच्छे लोगों के साथ ही दफना दी जाती हैं। महमूद ने हिंदुस्तान में अच्छा-बुरा जो भी किया वह उसकी मृत्यु के पंद्रह वर्ष बाद हिंदूवाद के पुनरुत्थान के साथ धूल में मिल गया। जिन्होंने तलवार उठायी थी उन्हें तलवारों ने ही समाप्त कर दिया।' लाहौर के पूर्व में मुसलमानों का नाम निशान तक मिट गया और महमूद की सफलताओं ने जहाँ हिंदूवाद के नैतिक विश्वास को हिलाने में असफलता पायी वहीं उसे अपने धर्म के प्रति कभी न खत्म होने वाली बदनामी भी मिली। दो सौ वर्ष बाद, जिन लोगों का महमूद से मतभेद था वे फिर से इस्लाम को वापस लाने में सफल हो गये। लेकिन अब तक समय बदल चुका था। मंगोल लुटेरों द्वारा अजम पर कब्जा हो जाने के साथ ही मुसलमानों का उजड्डपन समाप्त हो गया। फारसी पुनर्जागरण विकसित हुआ और नष्ट हुआ और प्राचीनकाल में हिंदू ऋषियों द्वारा बताये गये सर्वदेशीय सिद्धान्तों और प्रवृत्तियों की तरह की भावना ने दोनों सम्प्रदायों के लोगों के बीच विचारों के उस आदान प्रदान को सम्भव बनाया जिसके लिए अलबरूनी बहुत दिनों से कोशिश कर रहा था। जाड़े के मौसम में लूट करने के लिए सरहद पार करके आने वाले योद्धाओं की बजाय मध्य एशिया के जलते हुए गांवों से भारी संख्या में शरणार्थी आये जो ऐसी जगह की तलाश में थे जहाँ वे शान्तिपूर्वक सिर छुपाने का ठिकाना बना सकें क्योंकि उन्हें अपनी जन्मभूमि लौटने की अब कोई आशा नहीं रह गयी थी। साप फिर सामने आ गया था लेकिन इस बार उसके जहरीले दांत नहीं थे। मध्यकालीन हिंदुस्तान का बौद्धिक इतिहास अजमेर के शेख मोइनुद्दीन के आगमन से तथा इसका राजनीतिक इतिहास सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के राज्यारोहण से शुरू होता है। पूर्ववर्ती पीढ़ियों और इस पीढ़ी में विशेष बात यह है कि इसमें चिश्ती संत ने रहस्यवादी प्रचार शुरू किया और क्रान्तिकारी सम्राट ने प्रशासनिक और आर्थिक उपायों का शुरुआत की। हमारे देश के सही इतिहास से महमूद का कोई सरोकार नहीं है। लेकिन उससे (महमूद से) हम सबसे कड़वे घूंट का स्वाद लेने को मिला। बाद की पीढ़ियों के लिए महमूद घोर धर्मांध व्यक्ति माना जाने लगा जो कि वह नहीं था और महमूद के इस स्वरूप की वे मुसलमान आज भी पूजा करते हैं जो छोटे देवताओं के प्रति भक्ति के कारण कृष्ण भगवान के उपदेशों की अनसुनी कर चुके हैं। इस्लाम के सबसे बड़े दुश्मन सदा ही वे लोग रहे हैं जो अपने को इस्लाम का कट्टर अनुयायी बतलाते हैं।

सन्दर्भ और टिप्पणियाँ

1 शायरों के जीवन के बारे में विस्तार से यहाँ नहीं बताया जा सकता और न ही उनकी कृतियों की बाक़ायदा जाँच की जा सकती है। प्रोफ़ेसर ब्राउन की पुस्तक 'लिटरेरी हिस्टरी आफ़ पर्शिया' खंड 2 अध्याय 2 और मौलाना शिबली नुमानी की पुस्तक 'शिरुल अजम' खंड 1 में वे सारी चीज़ें आधुनिक रूप में रखी गयी हैं जो तज़किरा में मिलती हैं। नेशनल यूनिवर्सिटी अलीगढ़ द्वारा प्रकाशित हादी की पुस्तक 'स्टडीज़ इन पर्शियन लिटरेचर' भी देखें। फ़िरदौसी से सम्बन्धित किंवदन्ती की उर्दू नामक पत्रिका ने तीखी *आलोचना की है और क़ाज़ी निज़ा से चली आ रही कहानी के आकर्षण को समाप्त कर* दिया है। इस पत्रिका के सम्पादक थे मौलवी अब्दुल हक़ साहिब।

2. निज़ामी उल अरूज़ी उस-समरक़न्दी की पुस्तक 'चहार मक़ाला' में अलबरूनी और बूअली सिना के बारे में कुछ बड़े दिलचस्प क़िस्से मिल जायेंगे (गिब्स मेमोरियल सीरीज़)। बूअली सिना की संक्षिप्त जीवनी 'हबीबुस्सियार' में दी गयी है।

3 यह एक उल्लेखनीय सचाई है कि महमूद ने शायद ही कभी अपने सैनिकों के कठोर जीवन में हिस्सा बटाया हो। नये राजतन्त्र की मर्यादा को देखते हुए इस तरह की चीज़ अनुचित होती।

अध्याय 4

गजनी साम्राज्य का पतन

उत्तराधिकार का सवाल

सुलतान महमूद के दोनो लडके—मसूद और मोहम्मद—एक ही दिन पैदा हुए थे और यह तय कर पाना बहुत मुश्किल था कि उन दोनों में कौन बड़ा है। लेकिन मोहम्मद नेक ख़यालों वाला और पढ़ा लिखा राजकुमार था, वह अरबी में शायरी किया करता था और एक राजा के अधिकार के सभालने के लिए न तो उसके पास ताकत थी और न उसकी इच्छा थी। इसलिए स्वाभाविक तौर पर सबकी निगाहें उसके भाई पर टिकी थी जो शरीर से भी काफी मजबूत था और जिसका समूचा व्यक्तित्व रुस्तम की तरह था। जमीन पर रखी मसूद की गदा को कोई आदमी एक हाथ से नही उठा पाता था और उसके तीर इस्पात की चादर को छेद देते थे। सुलतान ने मोहम्मद के पक्ष में अपनी वसीयत लिखी और एक फरमान हासिल कर लिया जिस पर खलीफा की मजूरी थी। वजीर हसनाक ने भी मोहम्मद के लिए काम किया और इस सिलसिले में दरबार के अमीरो के बीच एक गठबन्धन हो गया। मसूद ने इन बातों को मानने से इकार कर दिया। उसने बडे जोरदार शब्दों मे एलान किया कि "इस मसले पर सही-सही फैसला किसी फरमान से नही बल्कि तलवार से हो सकता है" और जब सुलतान को उसके लडके की यह बात बतायी गयी तो उसने बडे दुख के साथ इस कथन की सच्चाई को महसूस किया।

सुलतान मोहम्मद

महमूद के शासन के अंतिम वर्षों में पूर्वी फारस पर हुई विजय का काफी श्रेय मसूद को प्राप्त है और 1029 ई० में राय से बलख वापस होते समय सुलतान ने खुरासान और नये जीते गये इलाकों के प्रशासन का भार मसूद पर ही छोड

दिया था। फलस्वरूप मोहम्मद के समर्थकों के लिए यह आसान था कि उसके पिता की मृत्यु के बाद वह राजधानी पर अपना अधिकार कायम कर लें। उन्होने माहम्मद का गोरखान स बुलाकर गद्दी पर बिठा दिया। नये सुलतान ने अपने को लोकप्रिय बनान के लिए काफी मात्रा म रुपये-पैस बाँटे। उसकी जनता और उसके सनिको ने इस दरियादिली के लिए सुलतान की काफी तारीफ की लकिन उस गम्भीरता स लेन से इकार कर दिया। सबको यह उम्मीद थी कि मसूद आयेगा और इस डावाडाल सरकार का उखाड फेंकेगा। मोहम्मद को गद्दी पर बठे अभी दो महीने भी नही हुए थे कि मशहूर अबुन नज्म अहमद अयाज, अली दयाह और गुलामो के एक गुट ने दिनदहाडे शाही अस्तबल से घोडे निकाल लिये और व बस्ट की ओर चल पडे। हिदुओ के सेनापति सौयन्द राय ने उन पर काबू पा लिया और इसके बाद जो लडाई हुई उसम बहुत बडी सख्या मे गुलामो का मौत का शिकार होना पडा। लेकिन इस लडाई मे खुद सौयन्द राय भी मारा गया और अयाज तथा अली दयाह को नशापोर म मसूद के खेमे तक पहुचने म कामयाबी मिल गयी।

मसूद का बढना

मसूद ने कहला भेजा था कि अगर खुत्बे' म उसका नाम पहले लिखा जाये तो वह खुरासान और ईराक स ही सन्तोष कर लेगा लकिन अपने भाई की ओर म इस प्रस्ताव का तीखा जवाब मिलन पर उसने गजनी की ओर कूच करने का फ़ैसला किया। दूसरी तरफ मोहम्मद राजधानी से टकीनाबाद की ओर बढा जहाँ उसन रमजान का महीना बिताया। लकिन उसके सबसे बडे समर्थका यूसुफ बिन सुबुक्तगिन (मरहूम सुलतान का भाई), अमीर अली खेशावन्द और वजीर हसनाक न मसूद को खुश करने की कोशिश की और इस कोशिश म उन्होने अपने उम्मीदवार माहम्मद के साथ विश्वासघात किया। ईद के दो दिन बाद अर्थात 3 अक्तूबर की रात म उन्होन मोहम्मद का उसके खेमे स बाहर घसीट लिया और कांधार के एक किले म उस भेजने के बाद व उसके भाई की अगवानी के लिए हरात की ओर चल पडे। मसूद ने उन लोगो की गलतियो को माफ कर दिया जो पिछले अनेक वर्षों स उसके खिलाफ साजिशो म लगे थे। अपने भाई के हुक्म मे मोहम्मद को अधा कर दिया गया। अमीर अली खेशावन्द को मार डाला गया और यूसुफ बिन सुबुक्तगिन का जेल म डाल दिया गया जहाँ उसकी मृत्यु हो गयी।

हसनाक का पतन

हसनाक को छोड दिया गया था ताकि बलख मे उसको सबके सामने अप

मानित किया जा सके। मसूद ने अपने पिता के मशहूर वजीर ख्वाजा अहमद बिन हसन मेमन्दी को हिंदुस्तान की जेल से वापस बुलाया और पूरी इज्जत के साथ उस पद पर उसे बिठा दिया जिस पर उसने लगातार 18 वर्ष तक काम किया था। बहाकी ने पदच्युत वजीर का ऐसा चित्रण किया जिससे सबकी हमदर्दी उसके साथ हो गयी। हफ्ता तक अपमानजनक और कठोर कद के बाद हसनाक को दीवान में हाजिर होने के लिए कहा गया जहां बड़े ख्वाजा ने असाधारण विनम्रता दिखायी। हसनाक से कहा गया कि वह एक करारनामे पर दस्तखत करे जिसके अनुसार उसकी सारी धन-दौलत सुलतान को मिल जाये और इसके बाद बड़े प्यार और भाईचारे के वातावरण में दोनों वजीर एक दूसरे से अलग हुए। हसनाक ने माफी माँगते हुए कहा कि 'सुलतान महमूद के शासन काल में और सुलतान के आदेशों से मैंने ख्वाजा की बेइज्जती की। यह मेरी गलती थी, लेकिन मुझे हुक्म का पालन करना था और मेरे सामने दूसरा कोई चारा नहीं था। मुझे वजीर का पद दिया गया, हालाँकि यह मेरे लिए नहीं था। फिर भी मैंने ख्वाजा के खिलाफ कोई षडयन्त्र नहीं रचा और हमेशा उनके आदमियों की तरफदारी की। मैं अपनी जिन्दगी से थक चुका हूँ लेकिन मैं चाहता हूँ कि मेरे बच्चों और मेरे परिवार के लोगों की देखरेख होनी चाहिए और ख्वाजा को मुझे माफ कर देना चाहिए।' उसकी आँखों से आँसू बह निकले और ख्वाजा की आँखें भी नम हो आयीं। उन्होंने जवाब दिया 'तुम्हें माफ कर दिया गया लेकिन तुम्हें इस कदर नाउम्मीद नहीं होना चाहिए क्योंकि तुम्हारे लिए सुख के रास्ते अभी भी मुमकिन हैं। मैं इस अल्लाताला की मर्जी मानता हूँ—अगर तुम्हारे साथ कोई हादसा हो गया तो मैं तुम्हारे परिवार की देखभाल करूँगा। लेकिन सुलतान ने फैसला कर लिया था और युद्ध-मन्त्री बू-सहल जौजनी भी अपनी योजना में लगा हुआ था। सुलतान महमूद के शासन के दौरान मक्का से वापस लौटते समय हसनाक जब सीरिया के रास्ते गुजर रहा था तो उस मिस्र के खलीफा विरोधियों ने एक चोगा देकर उसका आदर किया था और हसनाक पर करामाथी होने का आरोप लगाने के लिए यह घटना काफी थी। उस समय बगदाद के खलीफा ने महमूद से इस बात पर अपना विरोध प्रकट किया था, लेकिन महमूद को हसनाक के तर्कपूर्ण विचारों की जानकारी थी, इसलिए उसने कभी इस बेबुनियाद लांछन के लिए उसे सजा देने के बारे में नहीं सोचा।

महमूद ने अपने सेक्रेटरी को आदेश दिया 'इस बूढ़े जरा-तर खलीफा को लिख भेजो कि अब्बासी खलीफाओं के लिए मैंने सारी दुनिया में दखलदाजी की है। मैं करामाथियों की तलाश में लगा हुआ हूँ और जैसे ही कोई करामाथी मिलेगा और उसका करामाथी होना साबित हो जायगा वैसे ही उसे सूली पर

चढ़ा दिया जायेगा। यदि यह साबित हो गया कि हसनाक करामाथी है तो खलीफा को जल्दी ही पता चल जायगा कि उसके साथ कैसा सुलूक किया गया। लेकिन मैंने उसका पालन पोषण किया है और मेरे लड़कों तथा मेरे भाइयों के और उसके बीच कोई फर्क नहीं है। यदि वह करामाथी है तो मैं भी वही हूँ।' अब इस पुराने आरोप को फिर नये सिरे से उभारा गया। दो आदमियों को खलीफा के दूत की पोशाक पहनाकर मसूद के पास भेजा गया और उनके जरिये यह माँग की गयी कि हसनाक करामाथी है और उसे मौत के घाट उतार दिया जाय। मसूद ने ऊपर से हिचकिचाहट दिखायी, लेकिन खलीफा की माँग को उसने मान लिया। लेकिन सचाई किसी से छिपी नहीं थी। दरअसल जिन दिनों हसनाक का काफ़ी जोर था उसने एलान किया था कि 'मसूद को अगर गद्दी मिल जाये तो कोई भी मुझे फाँसी पर चढ़ा दे।' अब चूंकि मसूद को गद्दी मिल गयी थी इस लिए हसनाक को ऐसे जंगी घोड़े की सवारी करनी पड़ी जिसका उसे पहले कभी अनुभव नहीं हुआ था।

मृत्यु-दंड की राजनयिकों की शैली

फाँसी की टिकटी के नीचे आकर हसनाक ने अपना कोट और कमीज उतार फेंकी। 'उसका शरीर चाँदी की तरह चमक रहा था और उसका चेहरा ऐसा लग रहा था जैसे लाखों तसवीरें झिलमिला रही हों।' वहाँ मौजूद सभी लोग दुख से चीख रहे थे। हसनाक ने न तो अपने दुश्मनों द्वारा की जा रही अपनी बइज्ज़ती का कोई जवाब दिया और न पूछे जा रहे सवालों पर ही कुछ कहा लेकिन लोगों ने देखा कि वह मन-ही मन किसी इबादत में लगा हुआ था और उसके होंठ धीरे धीरे हिल रहे थे। उसका सिर काटकर खलीफा के पास भेजा जाना था इसलिए उसे एक टोप और नकाब पहना दिया गया ताकि अगर वहाँ मौजूद लोग पत्थर फेंकें तो उसका सिर चकनाचूर होने से बचा रहे। लेकिन सरकार द्वारा किराये पर बुलाये गये कुछ गुंडों को छोड़कर आम जनता में से किसी ने भी पत्थर नहीं फेंके। अगर शाही घुड़सवारों ने सही वक्त पर मोर्चा न सँभाल लिया होता तो जनता की ओर से बहुत बड़े पैमाने पर उथल-पुथल हो जाती। जिस समय जल्लाद ने हसनाक के गले में फन्दा डाला और फिर फन्दे को खींचा, तो वहाँ मौजूद नैशापोर के तमाम नागरिक चीख-चीखकर रो पड़े। सात वर्षों तक हसनाक के शरीर को फाँसी के फन्दे में लटकता छोड़ दिया गया। उसकी लाश पूरी तरह सूख गयी, पैरों की हड्डियाँ अलग होकर गिर गयीं और उसके शरीर के एक भी हिस्से को किसी को ले जाने की और कायदे से दफनाने की इजाजत नहीं दी गयी—किसी को यह पता नहीं चला कि उसका सिर कहाँ चला गया। इस दुखद घटना का चरम बिन्दु वह था जब औरतों को रोते देखकर हसनाक

की माँ ने राने स इकार कर दिया। जिस समय उसे बेटे की मौत की खबर दी गयी, उसके मुह से केवल एक दुख भरी कराह निकली और उसके होठो स गिने चुने शब्द निकले 'मेरे बेटे ने भी क्या किस्मत पायी! महमूद जस बादशाह ने उस सारी दुनिया दे दी और मसूद ने उससे सब-कुछ ले लिया।

मसूद और उसकी कठिनाइयाँ

मसूद अब अपने को उतना ही सुरक्षित समझने लगा जितना किसी जमाने म उसका बाप था। मसूद का काफी रोबदाब वाला डीलडौल मिला था और वह एक मजबूत और अटल इरादा वाला आदमी था। उसके चारो तरफ योग्य और वफादार अफसरो का गुट रहता था और इन्ही अफसरो ने वर्षों तक उसके पिता की भी सेवा की थी। मसूद के सामने अब ऐसा कोई भी प्रतिद्वन्द्वी नही था जिससे वह भयभीत होता। राज्य के इलाको सेनाओ, राजस्व और जमा किये गये खजाने को देखने स लगता था कि मसूद की हुकूमत काफी मजबूत हो चली थी। फिर भी जिस किसी ने उन दिनो की घटनाओ पर गौर किया होगा उसे यह पता चल गया होगा कि विनाश की शक्तियाँ हर जगह अपने काम म लगी हुई थी। महमूद की राजसत्ता को सभालना आसान काम नही था। मसूद ने अपने पिता के सबसे बुद्धिमान सलाहकारो की राय पर तनिक भी ध्यान नही दिया। उसके अन्दर बेहद आत्मविश्वास था जिसकी वजह से खतरे के क्षण मे मूर्खतापूर्ण आतक स वह बच जाता था लेकिन उसके अन्दर शात होकर सोचने की वह क्षमता बिलकुल नही थी जिसके लिए शारीरिक शक्ति की बजाय बौद्धिक शक्ति की जरूरत होती है। वह बिना सोचे समझे हमला बोल देता था और उसके अन्दर यह तय कर पाने की थोडी भी योग्यता नही थी कि कौन उसका सबसे खतरनाक दुश्मन है और कौन ऐसा दुश्मन है जिस पर ध्यान देने की जरूरत नही है। लडाई के मैदान म वह बडी बहादुरी के साथ अपना भाला चलाता था, लेकिन बडे अफसोस की बात है कि जितनी बहादुरी के साथ वह लडता था उतनी ही मूर्खता के साथ वह अपने अभियान शुरू करता था और दुश्मन के टूट पडने स पहले ही अपने सैनिको का मनोबल गिरा देता था। मसूद के अन्दर उन गुणो का अभाव था जो किसी राजनेता या सेनापति म होने चाहिए लेकिन अगर उसने कभी अपने मे किसी बुद्धिमान व्यक्ति के फैसले पर अमल किया होता तो उसे काफी सफलता मिलती। ख्वाजा हसन मैमन्दी न नागरिक मामलो म बडी कुशलता के साथ प्रशासन सभालने का काम किया और उस पहले स भी ज्यादा इज्जत मिली। लेकिन ख्वाजा न कभी सैनिक मामलो म दखलन्दाजी नही की। 1037 ई० मे उनकी मृत्यु हो गयी और मनचाहे ढग स काम करने के लिए अब मसूद को खुली छूट मिल गयी। नतीजा यह हुआ कि अपने पिता की मौत के

महज इस वर्षों के अन्दर ही मसूद अपनी सेना से हाथ धो चुका था और उसका साम्राज्य और स्वय वह एक असहाय भगोडे की तरह जहा-तहाँ छिपता फिर रहा था।

मसूद के सामने दो बडे खतरे थे—एक तो, पूव म हिन्दुस्तान के राय शासक और दूसरा, पश्चिम म सल्जूक लोग। महमूद ने राय शासको को अपने अधीन गुलाम बनाने की बजाय आतकित ज्यादा किया था और महमूद के न रहने पर उनका सिर उठाना निश्चित था। लेकिन व बडे आलसी लोग थे और हमेशा अपने को बचाव पक्ष म ही रखत थ। मसूद की योजना समय रहते सल्जूको को कुचल डालने की होनी चाहिए थी और उसे चाहिए था कि राय शासको को थोडा और अनुकूल समय आने पर दबाया जाय, लेकिन जिन दिनो सल्जूको का सकट तेजी से बढ रहा था मसूद ने अपने पिता की कामयाबियो की व्यर्थ की नकल करने क लिए अपनी सेना को हिन्दुस्तान की ओर भेजना पसन्द किया। मसूद के पास न तो बुद्धि थी और न ही सेनापति के गुण। महमूद ने जब भी हमले किये थ उसने हमेशा पूव और पश्चिम पर एक साथ धावा बोला था। हम सबस पहले पजाब की घटनाओ का पूरा-पूरा और तुलनात्मक वणन करेंगे।

पजाब का प्रशासन

इस हिन्दुस्तानी सूबे की अदभुत स्थिति ने इसके सैनिक और नागरिक अधिकारो को अलग करने के लिए असाधारण कदम उठाने के वास्ते महमूद को प्रेरित किया। प्रशासन सम्बन्धी सभी मामले काजी शिराजी नाम स विख्यात अबुल हसन अली के हाथो म सौंप दिये गये। काजी शिराजी बहुत ही साधारण व्यक्ति था जिसे सुल्तान ने अपने किसी मस्ती के क्षण म बडे ख्वाजा की शानदार हैसियत के खिलाफ खडा करने के बारे म सोचा था। इसके साथ ही उल्लेखनीय साहस और क्षमता वाला तुर्की सेनापति अली अरियारुक सबस बडा सेनापति बनाया गया। काजी और सेनापति एक दूसरे स स्वतन्त्र थ, लेकिन वे सीधे सीधे गजनी के मातहत थ। दोनो पर निगाह रखने के लिए बुल कासिम बुल हकम को समाचार वाहको का अधिकारी नियुक्त किया गया और हर महत्वपूर्ण खबर को गजनी तक पहुचाने की जिम्मेवारी उस दी गयी। अधिकार का बटवारा इसलिए किया गया था ताकि किसी एक आदमी के हाथ म सारी ताकत न आ जाये। इसके साथ ही एक सेनापति की नियुक्ति की गयी जिसका मकसद ठाकुरो (राय शासको) के विरुद्ध लडाई छेडना था, ताकि हिन्दुस्तान की लूटपाट को महमूद स्थायी रूप दे सके। लेकिन यह योजना सफल नहीं हो सकी। अरियारुक ने सारे विरोधो पर विजय पा ली और सर्वोच्च स्थिति प्राप्त कर ली। बदले मे काजी ने अपने को सैनिक वर्दी स लस किया, लेकिन उसे एक

गौण स्थिति म पहुचा दिया। फिर भी ख्वाजा की चिकनी चुपडी बाता क भुलावे म आकर अरियारुक बलख पहुचा जहा उस गिरफ्तार कर लिया गया और जेल म डाल दिया गया (माच 1031 ई०)।

अहमद नियालतगिन नय सनापति अहमद नियालतगिन को ख्वाजा न जो हिदायतें दी थी उसस उस यह पक्का यकीन हा गया कि उसके और काज़ी के बीच *अच्छे और सहयोगपूर्ण सम्बन्ध का गजनी म सन्देह की निगाह से देखा* जायेगा। शिराज़ का यह साथी चाहता है कि सारे सनापति उसके अधीन रह। तुम्हे राजस्व या राजनीतिक मामला के बारे म किसी भी व्यक्ति स कुछ भी नही कहना चाहिए लेकिन तुम्ह एक कमाडर क सारे दायित्वा को निभाना चाहिए ताकि शिराज़ तुम्हारी नस न पकड सक और अपमानित न कर सके।"
नियालतगिन के लाहौर पहुचने पर सनिक और असनिक अधिकारियो क बीच सघष फिर से शुरू हा गया। काज़ी ने शिकायत की कि नियालतगिन लगभग राजसी ठाठ-बाट से रहता है तुकमान गुलामा को रखे हुए है और उसके दिमाग म अपने ढग की योजनाएँ हैं। लेकिन ख्वाजा न नियालतगिन का समथन किया और पूरे जाश के साथ नियालतगिन न हिन्दुस्तान पर हमल की तैयारी कर ली।

बनारस अपने उस्ताद स सीखी गयी तज़ी के साथ आगे बढते हुए उसने *यमुना और गगा नदियो का पार किया और अचानक बनारस पहुच गया।* शहर मे ज्यादा देर तक रुकना खतरे स खाली नही था फिर भी वह किसी तरह सवेरे मे दोपहर तक रुका रह सका और इस थोडे स समय मे ही उसने बजाजा सर्राफो और इत्र फरोशा के बाजारो को जमकर लूटा और चूकि इसस ज्यादा लूटपाट करना मुमकिन नही था' इसलिए आगे बढ गया। काज़ी ने इस मौक का फायदा उठाया। उसने फौरन गुप्त रूप से यह खबर गजनी तक भेजी कि नियालतगिन ने लूट के जरिये काफी धन दौलत इकट्ठा किया है और इसे उसने सुलतान स छुपा लिया है। 'उसके इरादा के बारे मे किसी को कोई जानकारी नही है लेकिन वह अपने आपको महमूद का लडका बताता है। दरअसल डर या महत्त्वाकाक्षा न नियालतगिन को विश्वासघात के लिए प्रेरित किया और लाहौर वापस लौटत हुए उसने मन्सूराबाद के किले म काज़ी को कद कर दिया। *यह आजाद होने की एक कोशिश थी। सुलतान न अपने अफसरा स सलाह* मशविरा किया लेकिन उस धूप और बारिश म (जुलाई 1033 ई०) कोई भी हिन्दुस्तान पर हमला करने के लिए तयार नही हुआ। युद्ध मन्त्री ने कहा कि "अगर नियालतगिन की सेना को पीठ दिखाकर भागना पडे ता इसस ज्यादा बेइज़्ज़ती की बात कोई और नही होगी,' लेकिन लाहौर मे चूकि काफी बडी सना है इसलिए इसके खिलाफ लडने क लिए काफी बडी तादाद म सनिको को भेजना पडेगा। अपने साथ के सेनापतियो की कायरता से शर्मिन्दा होकर एक

हिंदू योद्धा आगे आया और उसने अपनी सेवाओं का प्रस्ताव रखा। सुलतान ने इस प्रस्ताव को बडी कृतज्ञता के साथ स्वीकार कर लिया।

हिंदू सेनापति—तिलक हिन्दू सेनापति तिलक के जीवन की घटनाओं को देखने से पता चलता है कि एक बादशाह की सेवा के लिए दोनों सम्प्रदाय—हिंदुओं और मुसलमानों—के लोग कितनी तेजी से अपने धार्मिक मतभेद भुला रहे थे और पूर्वी देशों में प्रचलित नमक हलाली की भावना का पालन कर रहे थे। तिलक एक नाई का लडका था लेकिन वह बहुत खूबसूरत था और उसने कपटाचार गुप्त प्रेम सम्बन्धों और जादू टोना का कश्मीर में रहकर काफी अध्ययन किया था। वह हिन्दी और फारसी बहुत अच्छी तरह लिख लेता था। सबसे पहले वह काजी शिराज़ी के यहाँ नौकरी कर रहा था लेकिन ख्वाजा की तरफ से बेहतर प्रस्ताव पाकर उसने शिराज़ी की नौकरी छोड दी। ख्वाजा के यहाँ उसने सेक्रेटरी और दुभाषिए के रूप में काम किया और इस दौरान ख्वाजा ने अनेक नाजुक मामले उस पर छोड दिए। यहाँ तक कि ख्वाजा के पतन से भी उसे कोई नुकसान नहीं हुआ क्योंकि महमूद को एक चालाक और उत्साही नौजवान की जरूरत थी और तिलक इसके लिए बहुत उपयुक्त था। हिन्दुस्तानी सेनाओं के सेनापति सौंधराय ने उत्तराधिकारी के प्रश्न पर गलत पक्ष लिया था और अयाज़ के खिलाफ मुठभेड में मारे जाने के बाद मसूद ने तिलक को इस पद पर रख लिया। इस प्रकार उसे काफी सम्मान मिला। हिंदुओं की प्रथा के अनुसार उसके मकान में ढोलक और नगाडे बजाये गये और सोने मढ़े झंडे उसे दिये गये। उसके अधीन एक सेना थी गज़नी वंश के सेनापति की भव्यता थी और सुलतान के अत्यंत नज़दीकी अफसरों का दर्जा उसे प्राप्त था। विचारशील बैहाकी का कहना है कि 'इस तरह की बातों पर समझदार आदमी को आश्चर्य नहीं होगा क्योंकि कोई भी आदमी जन्म से ही महान नहीं होता है। तिलक नाम के इस वीर पुरुष के पास तमाम गुण थे और जब तक वह जिन्दा रहा उसे कभी नाई का लडका होने का अपमान नहीं सहना पडा।

तिलक ने अपने अभियान की योजना तैयार की और जैसे ही उसकी योजना को सुलतान की मंजूरी मिली वह विद्रोहियों का सफाया करने के लिए चल पडा। नियालतगिन के लिए लाहौर में रुकना मुश्किल हो गया और वह रेगिस्तान की तरफ चला लेकिन तिलक ने अपनी सेना के साथ—जिसमें अधिकांश हिंदू थे—नियालतगिन का पीछा किया। उसने एलान कर दिया कि जो भी नियालतगिन को जिन्दा या मुर्दा पकड लेगा उसे पांच लाख दिरहाम दिये जायेंगे। जहाँ जहाँ नियालतगिन के हमदर्द मुसलमान मिले उनके दाहिने हाथ काट लिए गये और तिलक के चंगुल में पडे उन्हीं मुसलमानों को जिन्दा छोड़ा गया जिन्होंने यह वायदा किया कि वे नियालतगिन से अपना सम्बन्ध [illegible] रीति का

नतीजा भी वही निकला जिसकी आशा की गयी थी। लड़ाई में नियालतगिन हार गया और उसके तुर्कमान सैनिक तिलक की सेना में आ मिले। "अहमद की जिन्दगी खतरे में पड़ गयी, उसके आदमियों ने उसे अकेला छोड़ दिया और अन्त में मामला यहाँ तक बढ़ा कि जाटों तथा इस तरह के विश्वासघातियों ने अहमद के खिलाफ लड़ाई में भाग लिया।' अन्ततः जब वह सिन्ध पार करने की कोशिश कर रहा था जाटों ने उसकी हत्या कर दी। मसूद ने पंजाब में दो स्वतन्त्र न्याय व्यवस्था कायम करने की अपनी योजना रद्द कर दी और अपने लड़के राजकुमार मजदूद को सैनिक और असैनिक मामलों का सर्वोच्च अधिकारी नियुक्त करते हुए उसके हाथों में शासन सौंप दिया। फिर भी समूचा सूबा अराजकता और अव्यवस्था में डूबा हुआ था। गजनी साम्राज्य के सैनिकों का शहरों पर कब्जा था और गाँवों में हिन्दूवाद और स्वच्छन्दता का बोलबाला था। जनता की भावनाओं के अनुसार सरकार की जब इस सीमा तक असंगति हो तो इससे ज्यादा की उम्मीद नहीं की जा सकती।

हांसी अभियान 1037 ई०

सन 1037 ई० के जाड़ों में मसूद ने हांसी के खिलाफ चढ़ाई करने का फैसला किया। इसमें कोई शक नहीं कि पंजाब की हालत उन दिनों असन्तोषजनक थी, लेकिन एक दूसरे किले पर कब्जा करने से भी सरकार की स्थिति में स्थायित्व नहीं आ सका। दिन-ब-दिन सल्जूकों की ताकत बढ़ती जा रही थी और ख्वाजा ने मसूद को सलाह दी कि पश्चिमी मोर्चे पर दुश्मनों को हराने से पहले वह हिन्दुस्तान पर हमला करने की योजना न बनाये। अगर हुजूर खुरासान नहीं जाते हैं अगर तुर्कमान लोग किसी सूबे पर फतह हासिल कर लेते हैं अथवा अगर वे किसी गाँव को भी जीत लेते है और वही हरकतें करते हैं जिनके वे आदी हैं, मसलन लूटपाट कत्लेआम और आगजनी तो हांसी जैसी दस 'धार्मिक लड़ाइयाँ भी इस हरजाने की पूर्ति नहीं कर पायेंगी।' लेकिन मसूद ने इन सलाहों पर गौर नहीं किया। उसने कहा कि उसने हिन्दुस्तान पर हमला करने की कसम खायी है और वह इसे पूरा करेगा। वह काबुल होते हुए झेलम के तट पर पहुँचा जहाँ एक बीमारी ने जिसकी वजह से उसने कुछ समय के लिए शराब पीना छोड़ दिया था उसे घर दबोचा और वह अगले चौदह दिनों के लिए वहाँ रुका रह गया। वहाँ से तीन हफ्ते तक बढ़ते रहने के बाद उसकी सेना हांसी के किले तक पहुँची। हांसी के रक्षक सैनिकों ने किले के बचाव के लिए जबर्दस्त लड़ाई लड़ी लेकिन दस दिनों के घमासान युद्ध के बाद मसूद की सेना का उस पर कब्जा हो गया और किले के खजाने को सैनिकों ने आपस में बाँट लिया था। इसके बाद मसूद सोनपत की तरफ बढ़ा, लेकिन वहाँ का राजा दीपल हरी मसूद

की सेना को आते देख भाग खड़ा हुआ और उसके शहर को पंजाब में मिला लिया गया। वहाँ के दूसरे प्रमुख व्यक्ति राम ने हमलावर के पास काफी धन-दौलत भेजी और इस बात के लिए माफी मांगी कि बुढ़ापे और कमज़ोरी की वजह से वह खुद नहीं आ सकता।

गज़नी वापस पहुंचने पर सुलतान ने देखा कि उसकी गैर मौजूदगी में सल्जूकों ने तालीकान और फरियाब को लूट लिया है और राय के चारों तरफ घेरा डाल रखा है। हिन्दुस्तान पर हमले में लगे रहने की हरकत पर सुलतान ने शर्मिन्दगी महसूस की और वायदा किया कि अगली गर्मियों में वह सल्जूकों पर धावा बोल देगा। गज़नवियों और सल्जूकों के बीच तेज़ी से लड़ाई का माहौल तैयार हो रहा था।

सल्जूकों का उदय

गिब्बन का कहना है कि तुर्कमानों का गँवार किन्तु सर्वाधिक बुद्धिमान हिस्सा अपने पूर्वजों के बनाये झोपड़ों में ही रहता चला आ रहा था जबकि दरबार और शहर में रहने वाले तुर्कों ने व्यापार में महारत हासिल कर ली थी और सुख-सुविधाओं का भोग कर रहे थे।' तुर्कमानों के इन दोनों वर्गों के बीच कोई लगाव नहीं था। तुर्किस्तान के बड़े शहरों में रहने वाली सभ्य तुर्की जनता तथा खेती-बाड़ी की कीमत समझने वाली किसान तुर्की जनता के लिए अपने असभ्य और गँवार भाइयों को बर्दाश्त करना बहुत मुश्किल था। पिछले दो सौ वर्षों से मावराउन्नहर के सरदार बर्बर तातारों के खिलाफ सरहद पर पहरे का काम करते थे। लेकिन गज़नी साम्राज्य के उदय ने उनकी ताकत को बहुत कमज़ोर कर दिया था और उनके लिए अब अपना पुराना कर्तव्य पूरी क्षमता के साथ निभाना असम्भव हो गया था। मावराउन्नहर में सल्जूक जन-जाति के जो लोग बच रहे थे उनसे पड़ोस के कबीलों के सरदार बेहद नफरत करते थे, क्योंकि सल्जूक जाति के लोग हमेशा उनके इलाकों पर धावा बोल दिया करते थे। अलीतगिन के लड़कों ने जिन्होंने समरकन्द और बुखारा पर फिर से अपने परिवार का अधिकार स्थापित कर लिया था उन्हें बर्दाश्त करने से इन्कार कर दिया और जन्द के शासक शाह ने उनके घुमन्तू खेमों पर अचानक हमला बोल दिया। सल्जूकों से शाह की पुरानी दुश्मनी थी और इसका बदला लेने के लिए शाह ने एक ही बार में उनके आठ हज़ार पुरुषों को मौत के घाट उतार दिया जबकि सात सौ लोग जो किसी तरह बच गये थे ऑक्सस के दूसरी तरफ चले गये। लेकिन 1031 ई० में काशगर के यूसुफ कद्र खां की मौत हो गयी और इसके अगले वर्ष गज़नी वंश के योद्धा अल्तुनताश को—जिसे महमूद ने ख्वारज़म का गवर्नर नियुक्त किया था—मसूद ने आदेश दिया कि वह अलीतगिन के लड़कों

पर हमला कर दे। अल्तुनताश और अलीतगिन के लडको के बीच घमासान लडाई हुई जिसमे अल्तुनताश की तो मृत्यु हो गयी, लेकिन उसने दुश्मन की सेना के छक्के छुडा दिये और उन्हें बुखारा से खदेड दिया। मसूद ने अल्तुनताश के लडके हारून को उसके पिता के पद पर रखा, लेकिन हारून ने विश्वासघात किया और इसकी जल्दी ही उसे सजा मिल गयी। इन घटनाओ का नतीजा यह था कि उन सारी ताकतों को नष्ट कर दिया जाये जो मावराउन्नहर के उस पार पूर्वी तुर्किस्तान से तातार जन-जातियो के फारस की ओर बढने को रोक सकें। गज़नी साम्राज्य के अधिकारी उन गिरोहो को अपने अधीन करने मे पूरी तरह असफल थे जिन्होने आक्सस पार कर लिया था। उनके पास कोई स्थायी निवास-स्थान नही था इसलिए उन्हे लडाई के जरिये कुचलना असम्भव था। वे तितर बितर हो जाते थे और फिर बडे आराम से एक जगह इकट्ठा हो जाते थे। फिर भी यह कल्पना करना आसान है कि तातार के गडरिये जब लूटपाट और आगजनी करते हुए अचानक धावा बोल देते रहे होंगे तो उन लोगो पर क्या गुजरती रही होगी जिन्होंने कानून और व्यवस्था के तहत ही जिन्दगी गुजारी थी।

आक्रमको का नेतृत्व स्वाभाविक तौर पर सल्जूको के हाथ मे था और सन 1036 ई० मे लगातार लडते-लडते और जमीन की तंगी बर्दाश्त करते रहने के बाद थककर सल्जूको के तीन सरदारो ने सुलतान के पास एक अपील भेजी जिसमे माँग की गयी थी कि खुरासान के उत्तर-पश्चिम के पहाडो आक्सस और कराकुम के रेगिस्तान के बीच की जमीन अर्थात निशा और फरावा जिला को उन्हे चरागाह के रूप मे दे दिया जाये। इस दरखास्त पर इस्राइल बिन-सल्जूक के भाई बगू और बेगू के दो भतीजो तुगरिल और दाऊद ने दस्तखत किये थे और इसमे अन्त मे एक निराशा भरी धमकी थी कि उन्हे यह जगह इसलिए चाहिए क्योकि इस जमीन पर उनके लिए कोई जगह नही है और किसी ने उनके रहने के बारे मे नही सोचा है। मसूद ने अपने पिता की इस गलती पर झल्लाहट जाहिर की कि उन्होने इन ऊँट पालने वालो को अपने साम्राज्य मे बसा लिया लेकिन सल्जूको के प्रति चिकनी चुपडी बातें करने के साथ साथ उसने उन पर हमला करने के लिए 15 हजार सैनिको को भी भेज दिया। गजनी के सेनापति बगतागदी ने एक घमासान युद्ध के बाद सल्जूको को हरा दिया, लेकिन जब उसके सैनिक लूटपाट करने के लिए इधर उधर बिखर गये तभी सल्जूकी सैनिक पहाड के दर्रों मे से बाहर आ गये और उन्होने गजनी की सेना का लगभग सफाया कर दिया। गजनवियो के सामने सल्जूको की माग के आगे झुकने के सिवाय कोई रास्ता नही बच रहा लेकिन अपनी सफलता के साथ-साथ सल्जूकों की महत्वाकाक्षाएँ भी काफी बढ गयी थी और वे गजनवियो की सरहद पर स्थित मर्व और सरारूस नामक शहरो की माँग तो करने ही लगे खुरासान पर भी उन्होने कब्जे की माँग

की। लेकिन ऐसे समय मसूद ने हासी के हिंदुओं पर विजय पाना पसंद किया जबकि उसे अपनी सेनाओं को खुरासान की पहाडियों के दक्षिणी हिस्से में तैनात करना चाहिए था। 1036 37 ईसवी में उसकी गैर मौजूदगी के दौरान कालीमान और फरियाब की लूटपाट से सल्जूकों के अन्दर अपनी ताकत को संगठित करने की क्षमता आ गयी थी और वे इस स्थिति में पहुंच गये थे कि उत्तरी फारस में मसूद की ताकत को चुनौती दे सकें।

सन 1037 ई० के वसन्त में खुरासान के गवर्नर सुबाशी को मसूद से आदेश मिला कि वह सल्जूकों पर हमला करे। उसने इस आदेश का विरोध किया, क्योंकि हमले की स्थिति में वह बहुत कमजोर साबित होता लेकिन सुलतान अपने आदेश के पालन पर अडा रहा और सुबाशी को अपनी सेना लेकर सल्जूकों के खिलाफ बढ़ना पड़ा। उसे इस लडाई में पराजय का सामना करना पड़ा। एक ही चोट में सरास्म मव और समूचा खुरासान सल्जूकों के हाथ में आ गया। नेशापुर में तुगरिल को बादशाह के रूप में स्थापित किया गया। सल्जूकों और मसूद के बीच अब स्थायी शांति असम्भव थी और अगले वर्ष सरास्म पर मसूद की विजय से यह काम और भी मुश्किल हो गया।

मव का अभियान

1040 ईसवी की गर्मियों में सल्जूकों की सेना सरास्म के चारों तरफ इकट्ठी हुई और मसूद ने उस पर चढ़ाई करने का फैसला किया हालांकि इसके लिए उसने कोई तैयारी नहीं की थी। उन दिनों भयंकर अकाल पड़ा था और मसूद के सलाहकारों ने इस अभियान को स्थगित करने की सलाह दी लेकिन मसूद ने उन सलाहों पर ध्यान देने से इनकार कर दिया। मसूद के सैनिक जैसे-जैसे बढ़ते गये, सल्जूकों की सेना पीछे हटती गयी और उन्होंने अपने को मव में जमा कर लिया। मसूद की सेना हर कदम पर असंगठित होती जा रही थी। सैनिकों के लिए काफी दूर से अनाज खरीदकर लाना पड़ता था। गर्मी भी बेहद पड रही थी। दुश्मन ने सारे कुओं को मिट्टी से भर दिया था ताकि हर ओर से गजनी के सैनिक परेशान हो जायें। अधिकांश सैनिकों के पास घोड़े नहीं थे। न तो कोई अनुशासन था और न किसी का हुक्म चल रहा था। आखिरकार मव के पास दंदानिकन में मसूद की सेना को सल्जूकों ने चारों तरफ से घेर लिया और लडाई के लिए ललकारा। मसूद के अनेक सैनिक-अधिकारियों ने विश्वासघात किया और वे उसकी सेना छोड़कर भाग खड़े हुए। सैनिकों ने भी अपने अफसरों की नकल की। 'तुर्की सैनिक और हिंदुस्तानी सैनिक इस तरह से इधर-उधर हो गये कि अरबों या तुर्कों में फर्क करना मुश्किल हो गया। केवल शाही अंगरक्षक ही सुलतान के पास बचे रहे और उन्होंने अपनी बहादुरी अपनी ताकत तथा अपने

भाला के जोर से दोस्त और दुश्मन सबका अचम्भे मे डाल दिया और जो सुलतान के करीब आया उसका सफाया कर दिया। फिर भी मसूद को जबदस्त पराजय का सामना करना पडा। इतिहासकार का कहना है कि "मैंने सुलतान के लडके राजकुमार मसूद का इधर उधर दौडते भागते देखा और यह देखा कि वह अपने सैनिको को एकजुट करने के लिए परेशान था, लेकिन किसी ने उसके आदेशो पर ध्यान नही दिया क्योकि सब अपनी मर्जी के मालिक हो गये थे। सुलतान किसी तरह वहा से भाग खडा हुआ और आतक तथा दहशत मे डूबा वह अपनी राजधानी पहुचा। गजनी का साम्राज्य अब समाप्त हो चुका था।

सुलतान मसूद का अन्त

लडाई के मैदान म जिन अफसरो ने सुलतान को अकेला छोड दिया था उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया। राजकुमार मौदूद को एक सेना लेकर बलख भेज दिया गया लेकिन खुद मसूद सल्जूको से इतना डर गया था कि गजनी मे रहने का उसका साहस नही हुआ। उसने मजदूद को मुलतान भजा और राजकुमार इजादयार को आदेश दिया कि वह अफगानो पर निगाह रखे और इसके बाद शाही हरम म से तथा सुलतान महमूद के चुने हुए खजानो म से काफी सामान लेकर उन्ह तीन सौ ऊँटो पर लदवाकर वह लाहौर के लिए चल पडा। सबने सुलतान को सलाह दी कि वह ऐसा न करे। राजधानी छोडकर उसके चले जाने से चारो तरफ अराजकता और अव्यवस्था फैल जायगी। इसके अलावा खुद यह यात्रा भी खतरे से खाली नही थी। वजीर ख्वाजा मोहम्मद बिन-अब्दुस-समद ने कहा कि "हिन्दुओ पर मेरा खुद ही बहुत विश्वास नही है और न जाने बादशाह सलामत ने दूसरे नौकरो म कैसे यकीन कर लिया कि उन्होने उस रेगिस्तान म अपना खजाना ले जाने को कहा?" लेकिन बदकिस्मती मसूद के पीछे पडी थी और वह अपनी जिद पर अडा रहा। उसने अपने अफसरो पर देशद्रोह का भी आरोप लगा दिया। आखिर मारिगाला दर्रे मे गुजरते हुए वजीर की भविष्यवाणी सच निकली। अनेक तुर्की और हिन्दू गुलामो ने शाही खजाने के एक हिस्से को लूट लिया और यह सोचकर कि मसूद उनके अपराधों को माफ नही करेगा उन्होने उस उस सराय मे बन्द कर दिया जहाँ वह ठहरा हुआ था और उसके भाई नेत्रहीन मोहम्मद को तख्त पर बिठा दिया। मसूद को बन्दी बनाकर गिरी के किले म भेज दिया गया जहा उसे बाद म मार डाला गया।

मौदूद

9 वर्ष तक कैद म रखे जाने के बाद मोहम्मद को बादशाह बना दिया गया था, लेकिन इसके बाद भी वह केवल सूखी रोटी खाकर ही अपना काम चला

लेता था और सारा राजकाज उसका लडका अहमद देखता था जिसके बारे मे यह मशहूर था कि वह पागल है। लेकिन मौदूद ने अपने पिता के हत्यारो को बहुत थोडा समय दिया। वह तजी स बलख से गज़नी और फिर सिन्ध की ओर रवाना हुआ। मोहम्मद की सेना उसका मुकाबला करन के लिए आग बढी थी लेकिन उस नगरहार म हरा दिया गया और मोहम्मद तथा उसक लडको को गिरफ्तार करके वही मार डाला गया (सन 1041 ई०)। मौदूद ने अपन विजय स्थल पर एक सराय बनवायी और गाँव बसाया, जिसका नाम फतहाबाद रखा और अपने पिता के ताबूत के साथ गज़नी लौटा। लेकिन नगरहार की लडाई न पजाब का उसके हाथो मे नही आने दिया था। उसके भाई मजदूद ने जिसे मरहूम सुलतान न मुलतान का गवनर नियुक्त किया था अपनी ताकत को जुटाने म थाडा भी समय बर्बाद नही किया और मशहूर अयाज की मदद स उसने लाहौर पर कब्जा करके सिन्ध स लेकर हासी और थानेश्वर तक अपनी सरकार कायम कर ली। सन 1042 ई० मे मौदूद लाहौर की ओर बढा, लेकिन समय रहते ही मजदूद भी पहुच गया और उसने उसका बढना राक दिया। भयकर लडाई का खतरा पदा हो गया और मौदूद के अमीरो ने ललकारना शुरू किया। लेकिन बकरीद के दिन सवेरे मजदूद अपने खेमे मे मरा पाया गया। कुछ ही दिनो बाद अयाज की भी मौत हो गयी और बिना लडाई लडे ही पजाब मौदूद के हाथो म आ गया। लेकिन बात यही खत्म नही हो गयी थी, भविष्य म और भी कई सकट आने थ।

हिंदू पुनर्जागरण हासी, थानेश्वर, नगरकोट और लाहौर

अपने दुश्मन की कठिनाइयो स हिंदू राय शासक फायदा न उठायें और खासतौर से ऐसे समय जबकि सल्जूको ने उनका काम काफी आसान कर दिया हो—यह साचना ही गलत है। गज़ना का साम्राज्य अब एक छाटी सी रियासत बनकर रह गया था और नागरिको क आपसी झगडा स वह जजर हो चुका था। हमशा इस बात का खतरा बना रहता था कि पश्चिम क पडोसी दश उस हडप लेंगे। मौदूद की हालत ऐसी नही थी कि वह विजित हिंदुस्तानी प्रदशा को बचाये रख सके और पजाब तथा दूसरे इलाका के राय शासक जा मुसलमाना के डर स लोमडी की तरह जगल की ओर भाग गय थ फिर स पूरे साहस क साथ सिर उठाने लगे।' पासा तेजी स पलट गया। दिल्ली के राय के नतृत्व म बने एक हिन्दू राज्य सघ ने हासी और थानेश्वर पर कब्जा कर लिया। शहरो और गाँवो स गज़नी के अफ़सर भागने लगे। हिंदुओ के दिमाग म अब तक निराशा की जो भावना घर कर गयी थी वह दूर हो गयी और राय शासको न फ़सला कर लिया और सकल्प किया कि हमलावर के सम्मान का अपनी विजय से चूर चूर कर देंगे और हिन्दुस्तान के हर गाँव मे खुशहाली ला देंगे। हिंदुओ

के जिन पवित्र धार्मिक स्थानों पर सुलतान महमूद ने लूटपाट की थी उनमें से केवल नगरकोट ही उसके अधिकार में बना रह सका था। आम हिंदू के लिए नगरकोट पर मुसलमानों का कब्जा इस बात का प्रतीक था कि उनके धर्म पर जालिम ताकतों ने विजय पा ली है और राज्य संघ के निर्माताओं का यह पहला कर्तव्य था कि अपने धर्म के इस स्थायी अपमान को वे जितनी जल्दी हो सके समाप्त करें। हिंदुओं की सेना किले तक पहुंची और पूरी निष्ठा के साथ उन्होंने किले को चारों तरफ से घेर लिया। मुसलमानों की सेना मुकाबला करने के लिए तैयार थी लेकिन लाहौर के अमीरों से उसने मदद की जो मांग की उस पर ध्यान नहीं दिया गया और अब उनके सामने एक ही रास्ता बच रहा था कि वे अपनी जान बचाने के लिए हिंदुओं की शर्तों के आगे हथियार डाल दें। मंदिर का फिर से निर्माण किया गया और वेदी पर एक नयी मूर्ति स्थापित की गयी। समूचे हिंदुस्तान में यह खबर बिजली की तरह फैल गयी। हिंदू तीर्थयात्रियों में खुशी की लहर दौड़ गयी और एक बार फिर वे भारी संख्या में दर्शन करने आने लगे। 'मूर्तिकारों का बाज़ार इतना व्यस्त कभी नहीं रहा। इस्लाम अब एक बीती हुई ताकत बनकर रह गया था और ऐसा लगता था कि यदि एक धक्का और लगा तो यह हिंदुस्तान की जमीन से हमेशा के लिए खत्म हो जायगा। लाहौर में रहने वाले गजनी के अमीरों के बीच आपस में ही लड़ाई चल रही थी और वे मौदूद के प्रति अपनी निष्ठा भूल चुके थे, इसीलिए उन्होंने नगरकोट की मुस्लिम रक्षा सेना की अपील पर कोई ध्यान नहीं दिया था। लेकिन जब उन्होंने सुना कि दस हज़ार हिंदू घुड़सवार सैनिक भारी संख्या में पैदल सैनिकों के साथ उनके खिलाफ बढ़ रहे हैं तो उन्हें अपनी असुरक्षा का एहसास हुआ और मौदूद के प्रति वफ़ादारी की शपथ लेकर उन्होंने इस संकल्प के साथ अपने सैनिकों को जुटाया कि वे पूरी ताकत के साथ शहर की रक्षा करेंगे। हिंदू सेना घेरे को तोड़े बिना लौट गयी। इस प्रकार लाहौर तथा रावी के पश्चिम की ओर स्थित बड़े शहरों को बचाया जा सका। देश के बाकी हिस्सों में जल्दी ही हिंदूवाद ने मुसलमानों को भुला दिया। महमूद ने इस्लाम के जो निशान छोड़े थे वे सब मिटा दिये गये। दूसरी तरफ, हिंदुओं ने अपने दुर्भाग्य से कोई सीख नहीं ली। आर्यावर्त के गृह युद्धों को समाप्त करने के लिए कोई राष्ट्रीय सरकार नहीं बन सकी और लगभग डेढ़ सौ वर्ष बाद शहाबुद्दीन गोरी ने देखा कि हिंदू राजा महाराजाओं में फिर पहले जैसी फूट पड़ चुकी है।

गजनी राज्य का बाद का इतिहास

गजनी राज्य के बाद के इतिहास पर अधिक समय लगाने की जरूरत नहीं है। इसके छोटे मोटे राजे सल्जूक साम्राज्य के तहत अपना अस्तित्व बनाये रख

कर ही सन्तुष्ट थ, राजमहलो के अन्दर चल रह षडयन्त्रो स दुश्मनो को उपहास का मौका मिल रहा था और दोस्तो को निराशा हो रही थी। दिसम्बर 1049 ई० म सुलतान मौदूद की मृत्यु हो गयी और उसके चार वष के बेटे मसूद द्वितीय का तख्ता मौदूद के भाई अबुल हसन अली न पलट दिया। अबुल हसन अली को सुलतान महमूद के एक बेटे अब्दुररशीद न 1051 ई० म हरा दिया। सन 1054 ई० म अब्दुर्रशीद को उसके सेनापति दगाबाज तुगरिल न मार डाला, लेकिन तुगरिल ने अभी तख्त पर 40 दिन भी नही बिताये थ कि उसकी हत्या कर दी गयी। इसके बाद मसूद के बेटे फरुखजाद को जेल स निकालकर शासन की बागडोर उसके हाथ म दी गयी और उसने सात वष (1052 1059 ई०) तक राज किया जबकि उसके नेक भाई और उत्तराधिकारी सुलतान रजीउद्दीन इब्राहिम ने 1099 ई० तक यानी 40 वष स भी अधिक समय तक शासन किया। उसके 36 बेटे और 40 बेटियाँ थी और अच्छा वर न मिलने के कारण बेटियो की शादी सय्यदो और विद्वानो स करनी पडी। सुलतान इब्राहिम न हिन्दुस्तान पर दो हमले किये, जिनम से दूसरे हमले का उसन खुद ही नतृत्व किया (1079 1080 ई०)। उसकी सेनाए अजोधन (मौजूदा शकरगज के फरीद का शेख पाटन) पहुची और वहाँ स आगे बढते हुए रोपड के किले पर क़ब्जा किया जो एक ऐसी पहाडी पर स्थित था जिसके एक तरफ तो नदी थी और दूसरी तरफ साँपो स भरा जगल था। लेकिन दारा पर की गयी विजय बडी काव्यमय रही। इस नगर को शाह नामा के अफरासियाब द्वारा फारस स हिन्दुस्तान निर्वासित किये गये खुरासान के लोगो ने बसाया था। वे मूर्ति-पूजा करते थे और सारा जीवन पाप करने म बिताते थे' लेकिन उनका शहर अभेद्य समझा जाता था और इसलिए हिन्दुस्तान के राजाओ को उनके बीच विदेशियो को लूटने मे कभी सफलता नही मिली। लेकिन इब्राहिम दारा न चारो ओर फैले घने जगलो के बीच से छोटा रास्ता पकडा और ताकत के बल पर इस शहर को अपन अधीन कर लिया। इसके अलावा सुलतान के बारे म विख्यात था कि वह काफी समझदार बादशाह है जिस अपनी ताकत की सीमाओ का पूरा ज्ञान रहता है और इस प्रकार उसन अपनी जनता को काफी समय तक शान्ति म रखा।

इब्राहिम के बेटे अलाउद्दीन मसूद ने सल्जूक-सम्राट सुलतान सजार की एक बहन से शादी की थी और सोलह वष तक, शासन करने के बाद 1115 ई० मे उसकी मृत्यु हुई। उसके बेटे अरसलन शाह ने अपने भाइयो को मौत के घाट उतार दिया और एकमात्र उत्तराधिकारी बन गया। उन भाइयो म से बहराम शाह नामक एक भाई अपन मामा सजार के पास भाग गया था और उसकी जान बच गयी थी। सजार स अरसलान को खदेड दिया और बहराम को गद्दी पर बिठा दिया। लेकिन अरसलान वापस लौट आया और उसन बहराम को पकड लिया

तथा सजार न एक बार फिर गज़नी की ओर कूच किया (1117 ई०)। अरसलान को बन्दी बना लिया गया और एक वर्ष बाद उसे मार डाला गया। मुइज्जुद्दीन बहराम शाह एक बडा प्रतापी राजा था। उसने पजाब के गवनर माहम्मद बहालिम को दो बार हराया। शेख निजामी गजवी न मखजनुल असरार उसे समर्पित किया और उसके शासन के दौरान कालिला और दीमना का अरबी से फारसी म अनुवाद हुआ। लकिन गोर के सरदारो स हुए एक झगडे के फलस्वरूप गजनी को लूटपाट झलनी पडी और सुलतान बहराम का 41 वर्षो का शासन अपमान और बर्बादी के साथ समाप्त हो गया (सन 1152 ई०)।

सल्जूक साम्राज्य सुलतान तुग़रिल

इस बीच हर नश्वर चीज की तरह ही सल्जूको का साम्राज्य अपन विस्तार, सगठन और सडन के साथ चलता रहा। दडानिकन की लडाई स गजनी साम्राज्य के फारस वाले इलाके उनके हाथ म आ गय थे। इस राजवश के पहल सम्राट सुलतान तुगरिल (1039 1063 ई०) ने राय का अपनी राजधानी बनाया और अपन भाई दाऊद जफर (चगर) बेग का खुरासान का शासन सौंपा। जितनी आसानी स विजित लोगो न नय राजवश के साथ अपना ताल मेल बिठा लिया उसका श्रेय सल्जूक के शासको के नतिक चरित्र और सभ्यता की मोहक क्षमता को दिया जाना चाहिए। नय शासको ने अपने बबर तरीके छाड दिये और फारसी सम्राटो की प्राचीन परम्पराओ के अनुरूप काम करने लगे। तुर्कों की सैनिक क्षमता और फारसियो की प्रशासनिक प्रतिभा के मेल स एक ऐसे साम्राज्य की स्थापना हुई जिसका मिस्र के खलीफा विरोधियो तथा पश्चिम मे बाइज़नताइन साम्राज्य और पूव म कथे के शासको स सम्पक और सघष हुआ। इसके बाद शान्ति स भरी शताब्दी म किसी न भी गजनी वश के पतन पर दुख नही प्रकट किया। गिबन का कहना है कि तुर्कों की बहादुरी की प्रशसा करना एक सतही बात होगी और तुगरिल की महत्वाकाक्षा तुर्कों की बहादुरी के बराबर थी। अपन अधिराज्यो म तुगरिल अपन सनिको और अपनी जनता के पिता के समान था। ठोस और समानता पर टिके प्रशासन के जरिये फारस स अराजकता की बुराइयो को दूर कर दिया गया था और वे हाथ जो हमेशा खून म डूबे रहते थे अब न्याय और शान्ति के कार्यों म लग गय। गजनी के बादशाहो को इस बात की इजाजत दी गयी कि वे अपने बदनामी भरे वर्षों के धब्बे को दूर कर लें, लेकिन मुसलमानो और ईराक तथा एशिया-माइनर के ईसाइयो ने विजेता तुर्कों के वरदहस्त को महसूस किया। अजरबइजान को साम्राज्य म मिला दिया गया और इसफहान और राय म महमूद ने बुवाहिदो की जिस ताकत को कुचल दिया था उसे बगदाद म अन्तिम तौर पर समाप्त कर दिया गया और अल्लाह के बन्दो

ने फारमी राजवश की मौजूदगी और ग़रीबी पर हा रहे अत्याचार को समाप्त कर दिया। तुग़रिल का 'सुलतानुद्दौला और यामिन ए-अमीरल मोमनिन' की पदवियां दी गयी। एक सल्जूक योद्धा इत्सीज न सीरिया पर धावा बोल दिया और नील तक पहुच गया जबकि बाइज़ेनताइन साम्राज्य ने तौरा से लेकर एज़-रम तक छ सौ मील की सीमा पर तुर्की सनिका के दबाव का महसूस किया। लेकिन 72 वष की उम्र में तुग़रिल की मौत हो जान स लडाई का फैसला नही हो सका।

अल्प असलान

अल्प असलान (1063 1072 ई०) दाऊद का लडका था और वह अपने चाचा के साम्राज्य पर थाडे समय के गह-युद्ध के बाद आसीन हुआ था। उसन तुग़रिल द्वारा पूव म जीते गय प्रदेशा को बनाय रखन की कोशिश की। आरमीनिया और जार्जिया को साम्राज्य मे मिला लिया गया और तीन वर्षों (1068 1071 ई०) के युद्ध के बाद कुसतुनतानिया के भाग्य का फैसला हुआ और वह एशिया म शामिल कर लिया गया। इस मामले म सम्राट रोमनस डायगनीज़ द्वारा पहल ली गयी जो एक लाख सनिका को लेकर आगे बढा था। तीन बार जमकर लडाई होने के बाद तुर्कों को यूफ़ेट (फरात) के पार भागना पडा और जब सुलतान चालीस हज़ार सनिको को लेकर आग बढा तो सम्राट न बडे अपमानजनक ढग स बबर लोगा का आदेश दिया कि वे यदि शान्ति चाहत हैं तो राजमहल और राय नामक शहर को छोडकर चले जायें। लेकिन सुलतान के कुशल और तीक्ष्ण कदमा न ग्रीका की भारी सख्या म निराशा फैला दी और मुलजगद (मांदीकद) के युद्ध म तुर्की वीरो न अपने असगठित विरोधिया का इस सीमा तक कुचल दिया कि व फिर सिर न उठा सकें। रोमनस डायगनीज़ एक बन्दी को पकडकर दरबार म हाज़िर हुआ जिसके साथ अल्प असलान ने बहुत भद्रतापूण व्यवहार किया—अपने पराजित दुश्मना के साथ वह एसा ही व्यवहार करता था। पश्चिमी देशा की अपनी योजना पूरी कर लेन के बाद सुलतान मावराउन्नहर की विजय के लिए पूव की ओर बढ चला। लकिन आक्सस पार करत ही एक हत्यारे के छुरे न सुलतान को मौत की गाद मे पहुचा दिया और साढे नौ वष के शासन के बाद सुलतान के राज का असामयिक अन्त हो गया।

मलिक शाह

अल्प असलान के बटे मलिक शाह (1072 1092 ई०) का शासनकाल शान्ति और समृद्धि स भरा था और सल्जूक साम्राज्य के सर्वोत्तम दिना म स था। अपने पिता की अधूरी याजना का उसने मावराउन्नहर की विजय स पूरा किया और

मलिक शाह के खुत्ब' को जेक्सार्टीज़ से पार काशगर तक पढ़ा गया। अपने शासन के शेष वर्षों में सुलतान अपने विशाल साम्राज्य का चक्कर लगाता रहा और नागरिक प्रशासन की लगातार देखरेख करता रहा ताकि 'उसके दीवान से बिना इनाम पाये कुछ ही लोग जा सकें और न्याय के बगैर कोई भी न जाय।" तारीखों का क्रम (कलण्डर) अस्त-व्यस्त हो गया था जिसको गणितज्ञों की एक समिति ने (जिसमें नक्षत्रविद कवि उमर खय्याम शामिल थे) ठीक किया। उन्होंने मलिक शाह के जलाली युग की शुरुआत की। यह 'समय की ऐसी गणना थी जिसमें जूलियन पद्धति को पीछे छोड़ दिया गया था और यह ग्रेगरियन शैली के ज्यादा निकट थी।' अल्प असलान और मलिक शाह के नामों के साथ ही उनके मशहूर मन्त्री और सियासतनामा[1] के लेखक निज़ामुलमुल्क का नाम जोड़ दिया गया, जो पूर्वी देशों के अत्यन्त मशहूर वज़ीर थे। निज़ामुलमुल्क को उन दिनों की राजनीतिक सूझ बूझ का गहरा ज्ञान था और वह साहित्य तथा कला के संरक्षक थे। बगदाद की निज़ामिया यूनिवर्सिटी की इन्होंने ही स्थापना की थी। निज़ामुलमुल्क ने तीस वर्षों तक पूरे उत्साह और निष्ठा के साथ सल्जूक राजवंश की खिदमत की और जनता की निष्ठा तथा आने वाली पीढ़ी की कृतज्ञतापूर्ण स्मृति का उन्होंने प्राप्त किया। लेकिन बेगम तुर्कन खातून के प्रभाव ने सुलतान के दिमाग को निज़ामुलमुल्क की ओर से फेर दिया। बेगम चाहती थी कि उसका लड़का महमूद गद्दी पर बैठे। नतीजा यह हुआ कि सुलतान ने निज़ामुलमुल्क को 93 वर्ष की उम्र में उसके पद से हटा दिया। दुश्मनों के आरोपों का उन्हें सामना करना पड़ा और बाद में एक धर्मांध व्यक्ति ने उनकी हत्या कर दी। इसके अगले महीने ही मलिक शाह की भी मृत्यु हो गयी।

मलिक शाह के दोनों लड़कों—बर्कयारुक (1092 1104 ई०) और मोहम्मद (1104 1117 ई०) के बाद उनके भाई संजार (1117 1157 ई०) को राजगद्दी पर बैठने का अवसर मिला। संजार एक महान गौरवशाली और शक्तिवान राजा था जिसके अधीन राजकीय काम काज फिर वैधानिकता समानता और न्याय के रास्ते पर आ गये। संजार से पहले के राजाओं के शासनकाल में ये चीज़ें नष्ट हो गयी थीं। ईराक खुरासान और मावराउन्नहर की आबादी और समृद्धि में बढ़ोत्तरी हुई और पहले की तुलना में साम्राज्य का काफी विस्तार हुआ। फिर भी संजार के लम्बे शासनकाल में विघटन और पतन का दौर भी जारी रहा। प्रान्तीय गवर्नरों (अतावकों) के अन्दर आज़ादी की इच्छा जोर मारने लगी और तुर्कमानों की एक नयी नस्ल जेक्सार्टीज़ से पार फिर इकट्ठा होने लगी। धीरे धीरे साम्राज्य की बुनियाद कमज़ोर पड़ने लगी। संजार ने इस उफनती बाढ़ को रोकने की ज़बरदस्त कोशिशें कीं और बताया जाता है कि उसने 19 लड़ाइयाँ लड़ीं जिनमें से उसे 17 में सफलता मिली। लेकिन उसे यह नहीं पता था कि

इस सफलता का फायदा कैसे उठाया जाय। नतीजा यह हुआ कि उसकी सफलताओं से ज्यादा असफलताएँ महत्वपूर्ण रहीं। सन 1141 ई० में कराखातई क़बीले के काफ़ी लोग, जो तुर्किस्तान चले गये थे साम्राज्य के खिलाफ उठ खड़े हुए। समरकन्द के पास सजार की हार हो गयी और समूचा मावराउन्नहर प्रदेश गैर मुसलमानों (काफिरों) के हाथ में चला गया। इन आक्रमणों के एक दूसरे गुट गज़ तुर्कों ने 1153 ई० में सुलतान को पराजित कर पकड़ लिया और तीन वर्ष तक उन्हें अपने शिविर में एक बन्दी की हैसियत से रखा। अन्त में जब सुलतान किसी तरह कैद से निकलकर भागने में सफल हुआ और अपनी राजधानी पहुँचा तब तक उसका साम्राज्य समाप्त हो चुका था। खुरासान को गज़ लोगों ने बरबाद कर दिया था अताबकों ने केन्द्रीय सत्ता के प्रति अपनी वफादारी छोड़ दी थी और 'महान सल्जूकों का यह अंतिम बादशाह अपने पूर्वजों और पूर्वजों द्वारा स्थापित सभ्यता की रक्षा के असफल प्रयास में 72 वर्ष तक जूझते रहने के बाद अन्तत मौत की नींद में सो गया।

सल्जूक राजवंश की देखरेख में फारसी सभ्यता अभूतपूर्व शिखर पर पहुंच गयी। बारहवीं सदी के मध्य के वर्षों ने गजनी राज्य का अन्तिम तौर पर समाप्त होना और सल्जूक साम्राज्य का पतन देखा। ख्वारज्म और गोर वंशों ने इस खाली पड़े मैदान पर अपनी आधारशिला रखी लेकिन मंगोल के बर्बर योद्धाओं ने मुस्लिम जगत पर जिस समय अपना पूरा दबदबा क़ायम कर लिया था उस समय तक भी ख्वारज्म और ग़ोर में से कोई भी वंश अपनी पूरी ताकत के साथ खड़ा नहीं हो सका था।

टिप्पणी

1 कभी-कभी यह माना जाता है कि सियासतनामा राजनीतिशास्त्र पर एक शोध प्रबन्ध है लेकिन दरअसल यह राजनीतिक चालबाज़ों के बारे में लिखी गयी एक पुस्तक है और "धर्म द्रोहियों" के खिलाफ़ लिखा गया उग्र पम्फ़लेट है। इतिहास की दृष्टि से इसका बहुत ज्यादा महत्व है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

(1) प्रारम्भिक दिनो के प्रामाणिक ग्रन्थ

(क) राजनीतिक

1) अखबार उद दुश्रालिल मुनक्कातिया जमालुद्दीन अबुल हसन अली इबनी जाफिर (यह ग्रन्थ सातवी शताब्दी हिजरी सन के शुरू के दिनो का है। यह खलीफा के साथ महमूद के सम्बन्धो पर प्रकाश डालता है), पाडुलिपि— ब्रिटिश म्यूजियम ओर० 3685।

2) अल कामिल फि तारीख इज्जुद्दीन इब्न अल असीर (1160 1234)। (सन 1231 ईसवी तक का इस्लाम का सामान्य इतिहास) सी० जे० टानबग द्वारा सम्पादित (लडन 1867 74)।

3) अल मुतजम फिअखारीखिल मुलुक वल उमाम इब्न उल जावजी (1201 ई०) (खलीफा के साथ महमूद के सम्बन्ध) पाडुलिपि—बर्लिन 9436।

4) आदाबुलमुलुक व किफायत उल-मामलुक फख्र ए मुदब्बिर (13वी शताब्दी का प्रारम्भ। युद्ध की कला पर निबन्ध महमूद से सम्बन्धित एतिहासिक घटनाओ का ब्यौरा) पाडुलिपि—इडिया आफिस 647 ब्रिटिश म्यूजियम, एड० 16853 (इस अदब उल हरबवाश शुजा भी कहते हैं)।

5) किताब उल हिन्द अबू रहान अलबेरूनी, अरबी पाठ, ई० सी० सखाव द्वारा सम्पादित (लदन 1887), अंग्रेजी के अनुवादक ई० सी० सखाव (अलबेरुनीज इंडिया, दो खडो में लदन 1910)।

6) मजमुल अनसाब मोहम्मद बिन अली (सन 1333 ई० में रचित, इस पुस्तक में महमूद के पूर्वजो का ब्यौरा है)। पाडुलिपि—बिब्लि० नेट० सप्लीमेट 1278।

7) मीरातुज जमाँ फि-तारीख उल अय्यम सिब्त इब्न अल जावजी (1186 1256) इब्न-अल जावजी का पौत्र (खलीफा को महमूद द्वारा विजय

सम्बन्धी लिखे गये पत्रों के चुने हुए अंश) पाडुलिपि—ब्रिटिश म्यूजियम, ओर० 4619।

8) रहात-उस-सुदूर अबू बक्र मोहम्मद बिन अली अर रवन्दी डॉ० मोहम्मद इक्बाल द्वारा सम्पादित (कम्ब्रिज 1922)।

9) सियासतनामा निजामुलमुल्क तूसी (रचनाकाल 1092 ई०), चाल्स शेफर द्वारा सम्पादित (पेरिस, 1897), सम्पादन—खालखाली (तेहरान)।

10) तबकाते नासिरी मिन्हाजुस्सिराज जुजजानी (सन 1260 ई० में आसपास लिखित), सम्पादन एन० लस खादिम हुसैन और अब्दुल हइ (बिब० इंडिका, कलकत्ता 1864)—अँग्रेजी अनुवाद एच० जी० रावर्टी (बिब० इंडिका, कलकत्ता 1897)।

11) तारीखे श्राले-सुबुक्तगिन अबुल फजल बहाकी डब्ल्यू० एच० मोर्ले द्वारा सम्पादित (बिब० इंडिका कलकत्ता 1862), सम्पादन आगा सईद नफीसी (तेहरान, सन 1327 हिजरी)।

12) तारीख ए यामिनी अबू नस्र मोहम्मद बिन मोहम्मद अल जब्बार अल-उतबी व्याख्या सहित अरबी पाठ का सम्पादन अहमद मानिनी (काहिरा सन 1286 हिजरी) अरबी पाठ (लाहौर सन 1300 हिजरी) फारसी अनुवाद अबुल शराफ नसीब बिन जफर बिन-साद (तेहरान 1271) अंग्रेजी अनुवाद जेम्स रिनाल्डस (ओरियेंटल ट्रांसलेशन फंड लंदन 1838 ई०)।

13) तारीखे गजीदा हमदुल्ला मुस्तौफी सम्पादन ई० जी० ब्राउन (गिब ममोरियल सीरीज, लन्दन, 1913)।

14) तारीख जहाँकुशा अलाउद्दीन अता मलिक बिन मोहम्मद जुवैनी (गिब मेमोरियल सीरीज 1912—तेहरान सन 1351 हिजरी)।

15) जैन उल-अखबार अबू सईद अब्दुल हई बिन-अब्दुल हक बिन महमूद गर्दीजी (सुलतान अब्दुरशीद गजनवी के तहत लिखा गया सन 441 444 हिजरी), पाडुलिपि बोदलियन लाइब्रेरी वयूस्ले 240 सम्पादन डॉक्टर एम० नजीम सिद्दीकी।

(ख) गैर-राजनीतिक

16) चहार मकाला निजामी ए-अरूजी-ए-समरकन्दी सम्पादन मिर्जा मोहम्मद (लंदन, 1910) अनुवाद ई० जी० ब्राउन (लंदन, 1921)।

17) दीवान-ए फारुखी अबुल हसन अली फारुखी (प्राप्त—1038)—तेहरान

(मन 1301 1302 हिजरी), पाडुलिपि—इडिया ऑफिस, 1841—इतखाव ए फारखी (लाहौर सन 1354 हिजरी)।

18) **दीवान ए मसूद साद सालमान** (गजनवियो के बाद के युग के लिए महत्वपूण) पाडुलिपि—ब्रिटिश म्यूजियम, ईगटन, 701, सम्पादन (तेहरान, सन 1318 हिजरी)।

19) **दीवान ए-सय्यद हसन** (बाद के गजनविया के लिए)—पाडुलिपि इडिया आफिस सख्या 931।

20) **दीवान ए उसमान ए मुख्तारी** (सन 1149 या 1159 ई० मे प्राप्त। बेहराम शाह के शासन की दृष्टि स महत्वपूण) पाडुलिपि—बाँकीपुर लाइब्रेरी।

21) **गुलिस्ता** शेख सादी—फारसी पाठ (लखनऊ, दिल्ली आदि)

22) **हदीक्त उल शीर** सनाई गजनवी (1131 ई० म प्राप्त गजनविया के बाद के काल के लिए महत्वपूण) बी० आर० ए० एस कलकत्ता, बम्बई, 1275 हिजरी लखनऊ, 1304 हिजरी। **दीवान ए सनाई** तेहरान, 1274 हिजरी।

23) **जवामी उल हिकायात वा लवामुर रिवायात** सादी उद-दीन मोहम्मद अल आवफी पाडुलिपि—ब्रिटिश म्यूजियम एड० 1686—निजामुद्दीन की भूमिका लदन 1929।

24) **कुलियात-ए अनवरी** औहादुद्दीन अली अनवरी (1191 ई० मे प्राप्त—गजनविया के बाद व काल के लिए महत्वपूण) तबरीज 1260 1266 हिजरी लखनऊ 1880।

25) **लबाब उल अलबाब** मोहम्मद आवफी सम्पादन ई० जी० ब्राउन और मिर्जा मोहम्मद इब्न अब्दुल वहाव काजवीनी (लदन 1903 906)।

26) **मतिक उत तय्यीर** शेख फरीदुद्दीन अत्तर सम्पादन गार्सिन द तासी 1857—कुलियात, लखनऊ, 1877।

27) **मखुजान उल असरार** निजामी गजनवी (1202 म प्राप्त) सम्पादन एन० ब्लाड, लदन 1844।

28) **शाहनामा** फिरदौसी (मन 1021 मे प्राप्त) सम्पादन टनर मैकान (कलकत्ता 1829) सम्पादन मोहल (परिस 1878)।

29) **तजकिरात उल औलिया** शेख फरीदुद्दीन अत्तर सम्पादन निक्लसन (लदन एण्ड लडन 1905 1907)।

30) **तजकिरात उश-शौअरा** दौलत शाह समरकन्दी, सम्पादन ई० जी० ब्राउन (लदन 1901)।

31) क़ानून-ए मसूदी अलबेरुनी, पाडुलिपि—लिटन लाइब्रेरी, मुस्लिम यूनिवर्सिटी अलीगढ।

(2) बाद की कृतियाँ

32) असार-उल-वुज़रा शफुद्दीन हाजी (नवी शताब्दी हिजरी महमूद व वज़ीरा का विवरण), पाडुलिपि—इडिया आफिस सख्या 1569।
33) फुतूह-उस-सलातीन इज़ामी सम्पादन ए० महदी हुसैन आगरा (1938) सम्पादन एम० ऊषा, मद्रास (1950)।
34) हबीब उस सयार गयासुद्दीन बिन हमामुद्दीन उर्फ ख्वादमीर तहरान, सन 1270 हिजरी बम्बई 1857 ई०।
35) खुलासात उत-तवारीख सुजानराय भडारी सम्पादन के० बी० जफ़र हसन (दिल्ली, 1918)।
36) किताब ताजियात उल असार वा तजरबात उल असर अब्दुल्ला बिन फज़ल उल्लाह वस्साफ, तबरीज़ (1272 हिजरी) बम्बई (1269 हिजरी)।
37) किताब उल इबार इब्न खलदून (1398 ई० म लिखित), काहिरा, 1284 हिजरी।
38) मुतखाब-उत-तवारीख अब्दुल क़ादिर बदायूनी खड 1—फारसी पाठ का सम्पादन लीस तथा अन्य लोग (बिब० इडिका कलकत्ता 1869) अँग्रेजी अनुवाद रान किंग (बिब० इडिका)।
39) रौज़त उस-सफा मोहम्मद बिन खावन्द शाह उर्फ़ मीर खावन्द—लखनऊ, 1270-74 हिजरी तेहरान 1874 ई० आशिक रूप से अँग्रेजी म ई० रिहतसक का अनुवाद (ओरियेंटल ट्रासलेशन फड न्यू सीरीज लदन 1891)।
40) तबक़ात-ए अकबरी निज़ामुद्दीन बख्शी—बिब० इडिका (1927 35) अँग्रेजी अनुवाद बी० दे (बिब० इडिका)।
41) तारीख-ए-अलफी मुल्ला अहमद थट्टवी और अन्य। पाडुलिपि आई० आ० इथ० 110112।
42) तारीख ए फरिश्ता (गुलशन-ए इब्राहिमी) मोहम्मद क़ासिम हिंदू शाह फरिश्ता—पाठ लखनऊ 1865 पूना 1832। अँग्रेजी अनुवाद जे० ब्रिग्ज़ (हिस्ट्री ऑफ़ द राइज़ आफ़ माहम्डन पावर इन इण्डिया), कलकत्ता, 1910 (अत्यत अविश्वसनीय अनुवाद)।

(गन 1301 1302 हिजरी) पाडुलिपि—इडिया आफिस, 1841—इतराव ए-फारूखी (लाहौर, सन 1354 हिजरी)।

18) दीवान-ए मसूद साद सालमान (गजनवियो के बाद के युग के लिए महत्वपूर्ण) पाडुलिपि—ब्रिटिश म्यूजियम, ईगटन, 701, सम्पादन (तेहरान, सन 1318 हिजरी)।
19) दीवान ए-सय्यद हसन (बाद के गजनवियो के लिए)—पाडुलिपि इडिया आफिस, सख्या 931।
20) दीवान ए उसमान ए मुख्तारी (सन 1149 या 1159 ई० म प्राप्त। बहराम शाह क शासन की दृष्टि म महत्वपूर्ण) पाडुलिपि—बाँकीपुर लाइब्रेरी।
21) गुलिस्ताँ शेख सादी—फारसी पाठ (लखनऊ, दिल्ली आदि)
22) हदीक़त-उश शीर सनाई गजनवी (1151 ई० मे प्राप्त गजनवियो के बाद मे काल के लिए महत्वपूर्ण), बी० आर० ए० एस, कलकत्ता बम्बई 1275 हिजरी लखनऊ 1304 हिजरी। दीवान ए-सनाई तेहरान, 1274 हिजरी।
23) जवामी-उल हिकायात या लवामुर रिवायात सादी उद-दीन मोहम्मद अल आवफी पाडुलिपि—ब्रिटिश म्यूजियम एड० 1686—निजामुद्दीन की भूमिका, लदन 1929।
24) कुलियात ए अनवरी औहादुद्दीन अली अनवरी (1191 ई० मे प्राप्त—गजनवियो के बाद क काल के लिए महत्वपूर्ण) तबरीज 1260 1266 हिजरी लखनऊ 1880।
25) लबाब उल अलबाब मोहम्मद आवफी सम्पादन इ० जी० ब्राउन और मिर्जा मोहम्मद इब्न अब्दुल वहाब काजबीनी (लदन 1903 1906)।
26) मतिक उत तय्यीर शेख फरीदुद्दीन अत्तर सम्पादन गार्सिन द तासी 1857—कुलियात, लखनऊ 1877।
27) मखुजान उल असरार निजामी गजनवी (1202 म प्राप्त), सम्पादन एन० ब्लाड, लदन 1844।
28) शाहनामा फिरदौसी (सन 1021 म प्राप्त) सम्पादन टनर मकान (कलकत्ता 1829) सम्पादन माहल (पेरिस 1878)।
29) तजकिरात उल औलिया शेख फरीदुद्दीन अत्तर, सम्पादन निकलसन (लन्दन एण्ड लडन 1905 1907)।
30) तजकिरात उश शोअरा दौलत शाह समरकन्दी, सम्पादन ई० जी० ब्राउन (लदन, 1901)।

31) क़ानून ए मसूदी अलबेरूनी, पाडुलिपि—लिटन लाइब्रेरी, मुस्लिम यूनिवर्सिटी अलीगढ।

(2) बाद की कृतियाँ

32) असार उल-वुज़रा सैफुद्दीन हाजी (नवीं शताब्दी हिजरी महमूद के वजीरों का विवरण), पाडुलिपि—इडिया आफिस सख्या 1569।

33) फ़ुतूह उस सलातीन इसामी सम्पादन ए० मेहदी हुसन आगरा (1938), सम्पादन एम० ऊषा मद्रास (1950)।

34) हबीब उस सयार गयासुद्दीन बिन-हुमामुद्दीन उर्फ ख्वाँदमीर, तहरान, सन 1270 हिजरी, बम्बई, 1857 ई०।

35) खुलासात उत-तवारीख सुजानराय भडारी सम्पादन के० बी० जफर हसन (दिल्ली 1918)।

36) किताब ताजियात उल अमसार वा तजरबात उल असर अब्दुल्ला बिन फज़ल उल्लाह् वस्साफ तबरीज़ (1272 हिजरी), बम्बई (1269 हिजरी)।

37) किताब उल इबार इब्न खलदून (1398 ई० मे लिखित) काहिरा 1284 हिजरी।

38) मुतख़ाब उत-तवारीख अब्दुल कादिर बदायूनी खड 1—फारसी पाठ का सम्पादन लीम तथा अन्य लाग (बिब० इडिका, कलकत्ता 1869) अँग्रेज़ी अनुवाद रान्किंग (बिब० इडिका)।

39) रौजत उस सफ़ा मोहम्मद बिन खावन्द शाह उर्फ मीर खावन्द—लखनऊ 1270 74 हिजरी तेहरान 1874 ई० आंशिक रूप मे अँग्रेजी मे ई० रिहनसन का अनुवाद (ओरियेंटल ट्रासलेशन फड न्यू सीरीज लदन 1891)।

40) तबकात-ए अकबरी निज़ामुद्दीन बख्शी—बिब० इन्डिका (1927 35) अँग्रेज़ी अनुवाद बी० डे (बिब० इडिका)।

41) तारीख-ए अलफी मुल्ला अहमद थट्टवी और अन्य। पाडुलिपि आई० आ०, इथे० 110112।

42) तारीख ए फरिश्ता (गुलशन ए इब्राहिमी) मोहम्मद कासिम हिन्दू शाह फ़रिश्ता—पाठ लखनऊ 1865, पूना, 1832। अँग्रेज़ी अनुवाद जे० ब्रिग्ज़ (हिस्टरी आफ द राइज़ आफ मोहमडन पावर इन इन्डिया), कलकत्ता, 1910 (अत्यन्त अविश्वसनीय अनुवाद)।

(3) आधुनिक कृतियाँ

43) ए हिस्टरी आफ पर्शिया सर परसी माल्कम लदन 1930।
44) डिक्लाइन एण्ड फाल आफ द रोमन एम्पायर ई० गिब्बन।
45) हिस्टरी आफ इडिया एज टोल्ड बाई इटस ओन हिस्टोरियन्स सर एच० एम० इलियट खड 2 सम्पादन डावसन (लदन)।
46) लिटरेरी हिस्टरी आफ पर्शिया ई० जी० ब्राउन लदन, 1902 1924।
47) शेर उल अजम शिबली नूमानी पाँच खड अलीगढ 1324 1337 हिजरी।
48) तुर्किस्तान डाउन टू द मगोल इनवेजन डबल्यू० बारथोल्ड अंग्रेजी अनुवाद एच० ए० आर० गिब लदन 1928।
49) द इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका प्रोफेसर हौथस्मा का सल्जूक' पर लेख।
50) द इनसाइक्लोपीडिया आफ इस्लाम चार खडो मे (लदन और लेडन 1913)।

अनुक्रमणिका